कर्तव्य पथ का मन

‘ न हार, न जीत ’

Khiranand

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Khiranand 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7542-918-0

Cover design: Anuj
Typesetting: Tanya Raj Upadhyay

First Edition: March 2026

समर्पित

पहले कदम संभालने वाले हाथों को समर्पित, और उन उजालों को, जिन्होंने मेरे अंधेरे पलों को राह दिखायी।

आभार

हर पुस्तक दो यात्राएँ तय करती हैं, एक वह जो पन्नों पर लिखी जाती हैं, और दूसरी वह जो लेखक के भीतर घटित होती हैं। इस पुस्तक का अस्तित्व उन सभी के कारण संभव हुआ, जिन्होंने इन दोनों यात्राओं को आकार दिया।

शिक्षकों और मार्गदर्शकों के नाम, जिन्होंने परिणामों से अधिक प्रयास पर भरोसा किया, और उत्तरों से अधिक प्रश्नों की कद्र की, आपने सिखाया कि सीखने की जड़ें दबाव में नहीं, बल्कि धैर्यपूर्ण मार्गदर्शन में सबसे अधिक फैलती हैं।

माता-पिता और परिवार के नाम, जो हर अनकही संघर्ष के पीछे खड़े रहते हैं, जो तब आत्मविश्वास सींचते हैं जब दुनिया केवल प्रदर्शन को मापती है, आपकी सहज अंतर्दृष्टि ही किसी भी बच्चे को मिलने वाली पहली बुद्धि है।

छात्रों के नाम, जिन्होंने अपने डर, अपेक्षाएँ, आशाएँ और टूटने जैसी नाज़ुक भावनाएँ साझा की आपकी ईमानदारी ने इस पुस्तक को उसका भावनात्मक सत्य दिया। आपकी यात्राएँ, किसी भी रैंक से अधिक, इस दुनिया को समृद्ध करती हैं।

शोधकर्ताओं और विचारकों के नाम, जिनके कार्यों ने इस कथा की बौद्धिक नींव रखी। डैनियल काह्नमैन, कैरल ड्वेक, जेम्स क्लियर, एंजेला डकवर्थ और अन्य अनेक। आपके कारण मन की विज्ञान-सम्मत समझ हर उस व्यक्ति तक पहुँच पाई जो विकास का इच्छुक है। उन पाठकों के नाम, जो भुवन और आरव की यात्रा के साथ चले आशा है कि आप वे सीख आगे ले जाएँगे जो सबसे अधिक मायने रखती हैं: जागरूकता, अनुशासन, रीति, करुणा, और फिर से शुरू करने का साहस। और अंत में नीम के उस वृक्ष के नाम, जिसकी रूपक-

छाया, उसकी सुरक्षित, शांत, और आत्ममंथन से भरी जगह, ने इस कहानी को उसका हृदय दिया। ईश्वर करे हम सबके जीवन में ऐसी ही कोई शांत शरणस्थली हो, जहाँ हम स्वयं को सत्य के साथ देख सकें।

भूमिका

हर व्यक्ति के जीवन में ऐसे क्षण आते हैं... शांत, लगभग अनदेखे जो कभी विजय से चिह्नित होते हैं, कभी हानि से; कभी उत्सव से भरते हैं, तो कभी दुःख की छाया में डूब जाते हैं। ये क्षण समय की मापी हुई मिनटों में चुपचाप घुल जाते हैं और भीतर एक प्रश्न उठा जाते हैं "क्या मैं वास्तव में सक्षम हूँ उन अपेक्षाओं, उन भारों, उन नजरों के पार, जो दुनिया मेरे लिए तय करती है?" इस पुस्तक का जन्म ऐसे ही क्षणों से हुआ। यह उस सबसे सूक्ष्म, सबसे अमूर्त सत्य को उजागर करने का प्रयास है एक ऐसे मन को समझने का, जो संख्याओं, तुलनाओं और अदृश्य मानकों की भीड़ से दूर चुपचाप खिलता है। दुनिया हमें सिखाती है कि तेज बनो, कुशल बनो, समस्याएँ हल करो, चुनौतियों को पार करो। परंतु सलाहों और ढाँचे की इस भीड़ में एक और पुकार बनी रहती है, अधिक सरल, अधिक सच्ची: स्वयं के भीतर उतरने की पुकार। स्वयं को वस्तु की तरह नहीं, बल्कि रहस्य की तरह देखने की पुकार। मैंने इसे एक बच्चे की खिड़की से बाहर झाँकती आँखों में देखा है, माँ के कोमल स्पर्श में देखा है, दोस्तों की झिझकती मुस्कानों में महसूस किया है। हमसे कहा जाता है कि निश्चितता का पीछा करो, ऐसे सूत्र खोजो, ऐसी रूप-रेखाएँ बनाओ जो हर चीज़ को समझा देने का वादा करती हैं। लेकिन हर कहानी, जिसे बताना सार्थक है, हमेशा गलत समझे जाने की भी संभावना रखती है। मन सीधी रेखाओं में नहीं चलता। वह भटकता है, वह सोचता है, वह स्मृतियों की बुनावट में अपना अर्थ खोजता है। 'कर्तव्य-पथ का मन' में, मैं आपको भुवन, हमारे सरल, संवेदनशील नायक के साथ दो यात्राओं पर चलने का निमंत्रण देता हूँ: एक बाहरी दुनिया की, और दूसरी उसके भीतर फैले अनदेखे, अनकहे मन-प्रांगण की। उसकी यात्रा सरल नहीं होगी और शायद यही बात महत्वपूर्ण है क्योंकि

यही यात्रा हमें सिखाती है कि गलत समझे जाने का साहस और अपने भीतर की सच्चाइयों पर भरोसा रखने की शक्ति कितनी आवश्यक है उससे पहले कि दुनिया हमारे लिए उन सच्चाइयों को परिभाषित कर दे। मन, जैसा कि इन पन्नों में अनुभव किया जाएगा, कोई ऐसी वस्तु नहीं जिसे ठीक किया जाए, न ही ऐसा कार्य जिसे पूरा कर दिया जाए। मन एक स्थान है, जहाँ जाया जाता है, जहाँ रुककर सुना जाता है, जहाँ कहानियाँ अधूरी रहते हुए भी अर्थ देती हैं।

भुवन की हिचकिचाहटों में, उसकी माँ की शांत निश्चितता में, और परिवार की गर्माहट में आप शायद अपने ही अंश देखें। सच्ची शिक्षा इन क्षणों को पहचानने में है, उनके साथ चलना सीखने में है और भरोसा रखने में है कि मन, आपका मन, अपनी अनजानी लय में हमेशा उस सत्य की ओर लौटता है जो आपको बदलने की क्षमता रखता है। जीवन आपको अनेक परीक्षाएँ देगा, लेकिन सही समझ, वह दुर्लभ, कीमती उपहार, उन्हीं में से उभरता है। इन पन्नों से गुजरते हुए, अपने मन को पहले से अधिक ध्यान से सुनिए, उसकी उलझनों को, उसकी जिज्ञासाओं को, उसकी अद्भुत दृढ़ता को। क्योंकि अंत में, जो वास्तव में मूल्यवान है, उसे गिना नहीं जा सकता। उसे सिर्फ महसूस किया जा सकता है, जिया जा सकता है, समझा जा सकता है, और कहानियों के सहारे, साझा किया जा सकता है। इस यात्रा का कोई सूत्र नहीं। सिर्फ एक निमंत्रण है, आरंभ करने का।

अनपेक्षित मुलाक़ातें: आरंभ का स्थल

यह कोई भी क्षण हो सकता है—

कोई घटना, कोई अंतरदृष्टि, कोई एहसास

जो आपकी नियमित राह को अचानक रोक दे

और आपकी दुनिया को

एक बार फिर, नए अर्थ में देखने पर मजबूर कर दे।

गया, बिहार | अक्टूबर 2025

गया की सुबह कुछ इस तरह उतरती थीं मानो उजाला खुद भी पहाड़ों और नदी के बीच चल रही चुप्पी भरी बातचीत को बाधित नहीं करना चाहता। भुवन अपने घर के पीछे की ओर जाती उस पत्थरीली पगडंडी पर चढ़ रहा था, एक रास्ता जो ऊबड़-खाबड़ चट्टानों, जंगली घासों और मिट्टी में चमकते अभ्रक के कणों से भरा था। नीचे, शहर अभी जाग ही रहा था, रसोई की चूल्हों से उठता धुआँ, मंदिरों की घंटियाँ हवा में तैरती गूँज, और पहाड़ी की चोटी से बहती चाँदी-सी हल्की चमक लिए जल-धारा, सब मिलकर सुबह को अपना आकार दे रहे थे। पगडंडी के उस मोड़ से, जहाँ रास्ता एक खुली जगह में बदल जाता था, विष्णुपद मंदिर दिखाई देता, उसका शिखर पत्थर में तराशी हुई एक प्रार्थना की तरह आकाश की ओर उठता हुआ। यह दृश्य हमेशा भुवन के भीतर कुछ स्थिर कर देता था। बचपन में मंदिर उसके लिए केवल एक रीति था; आज वे स्मरण के स्थल बन चुके थे। यह पहाड़ी रास्ता आमतौर पर उन लोगों द्वारा चला जाता था जो भुवन की तरह ही उम्र और अनुभव के थे, अधिकारियों, शिक्षकों या उन कुछ खिलाडियों द्वारा जो अभ्यास के लिए अभी भी पहाड़ पर आते थे। लड़के यहाँ कम ही दिखाई देते।

ढलान कठिन थी, और आगे घना जंगल था, जहाँ हवा भी सावधानी से चलती प्रतीत होती। इसीलिए जब भुवन ने अपने आगे एक दुबला-पतला, स्कूल जाने वाले बच्चे जैसा कद-काठी वाला लड़का देखा, तो वह थोड़ा धीमा हो गया।

लड़का पहले तेज़ी से चल रहा था, मानो विचारों से भागने का प्रयास कर रहा हो। लेकिन ढलान ने उसकी गति थाम ली। कदम लड़खड़ाए। वह झुककर घुटनों पर हाथ रखकर खड़ा हुआ, ऐसी कोशिश करता हुआ कि संघर्ष दिखे भी नहीं और छिप भी जाए। जब भुवन धीरे से उसे पार करता हुआ आगे बढ़ा, लड़के ने सिर नहीं उठाया। लेकिन उस एक पल की झलक में भुवन ने उसकी आँखों में नमी देखी, ऐसी नमी जो केवल थकान की नहीं होती, बल्कि उस भार की होती है जिसका कोई शब्द नहीं होता। कदमों की आहट और किसी दूसरे व्यक्ति की उपस्थिति लड़के को अपने आँसू पोंछने पर मजबूर कर गई, बहुत जल्दी, ठीक वैसे जैसे लड़के रोते हुए पकड़े नहीं जाना चाहते। भुवन ने अपनी रफ़्तार थोड़ा और धीमी कर दी, दूरी नहीं, बस उसे जगह देने के लिए। कुछ देर वे दोनों चुपचाप चलते रहे। रास्ता सँकरा था, कंकड़ पैरों से लुढ़कते जा रहे थे, और पेड़ों के बीच से आती रोशनी मानो अधूरे विचारों की तरह बिखरी-बिखरी उतर रही थी। आख़िरकार, भुवन ने बात की, न उपदेश की तरह, न सवाल की तरह सिर्फ़ उपस्थित होकर।

“चढ़ाई कठिन है” उसने धीरे से कहा। लड़के ने सिर हिलाया और उसकी आवाज़ तथ्य के रूप में कही गई स्वीकारोक्ति जैसी लगी “सब लोग तो समूह में आते हैं… मैंने सोचा… अकेले कोशिश कर लूँ।” वाक्य नहीं, उस वाक्य के भीतर छिपा घाव था। ढलान और तीखी हो गई थी, जिसके आगे जंगल का प्रवेश था। वे दोनों साथ-साथ चढ़ते गए न अधिकारी और अजनबी की तरह, न बड़े और छोटे की तरह, बल्कि दो ऐसे यात्रियों की तरह जो अपने-अपने अनदेखे बोझ लिए एक ही मार्ग पर चल रहे हों। चोटी पर पहुँचते ही हवा बदल

गई, ठंडी, स्थिर, और पीठ के पसीने को सुखाती हुई। लड़का अचानक टूट गया। “मैं फेल हो गया…” उसने कहा। “और… मुझे नहीं पता घरवालों को कैसे बताऊँ।” भुवन की नज़र घाटी पर टिक गई। असफलताएँ, परीक्षाएँ, नंबरों की राजनीति, उम्मीदों का वजन। वह भी कभी मानता था कि ये सब किसी को परिभाषित कर देते हैं। लेकिन पहाड़ समय को अलग ही समझते हैं। “बैठो, ” भुवन ने एक पत्थर की ओर संकेत किया। लड़का बैठ गया। जंगल अपनी गुनगुनाहट में लगा रहा। “मुझे बताओ, ” भुवन ने धीरे से कहा, “तुम्हारे लिए सफलता का मतलब क्या था?” लड़का घाटी की ओर देखता रहा, मंदिर, नदी, और धीरे-धीरे जागते छोटे शहर की ओर। “कि… मैं कुछ काबिल हूँ।” उसने फुसफुसाया। भुवन ने उसे यह नहीं कहा कि वह काबिल है, ऐसी आसान सांत्वना सच्चाई के बोझ को हल्का नहीं करती। उसने बस धीरे से अपने अतीत की ओर लौटते हुए कहा, “तुम मुझे… उस भुवन की याद दिलाते हो जो मैं तुम्हारी उम्र में था। मुझे याद है… अभी-अभी मेरा 10वीं का रिज़ल्ट आया था… और उन शब्दों के साथ पहाड़, घाटी और सुबह की हवा धीरे-धीरे धुँधली होने लगी और स्मृति का द्वार खुल गया।

अनुक्रमणिका

भाग I — संभावनाओं की प्रथम किरण 1

अध्याय 1 — पहली विजय 2

अध्याय 2 — विरोधाभासों का शहर 5

भाग II — संघर्ष से प्रयत्न तक 17

अध्याय 3 — संघर्ष की सतत राह 18

अध्याय 4 — अभियंता की दृष्टि 31

भाग ।।। — जीवन-यात्रा का निर्णायक मोड़ 43

अध्याय 5 — बिखरी हुई रैंकिंग्स 44

अध्याय 6 — तर्क और जीवन के बीच की दिशा 56

भाग IV — आत्म-निर्माण का अनंत प्रवाह................................. 82

अध्याय 7 — नीम वृक्ष संवाद: एक नई शुरुआत 83

अध्याय 8 — स्वयं को गढ़ने का अभ्यास 91

भाग I — संभावनाओं की प्रथम किरण

हर बड़ी यात्रा की शुरुआत किसी छोटी, कोमल-सी रोशनी से होती है, एक ऐसी पहली किरण, जो मन के भीतर कहीं अदृश्य संभावनाओं को जगाती है।

यही पहली किरण, युवावस्था के अँधेरे और उजाले के बीच रास्ता बनाती है। यही वह क्षण है जब आत्मविश्वास जन्म लेता है, पहली चुनौती सामने आती है,

और मन पहली बार अपने आपको परखने की कोशिश करता है।

इस भाग "संभावनाओं की प्रथम किरण" में भुवन की उसी शुरुआती चमक, उस प्रारंभिक संघर्ष, और भीतर जागती नई समझ की कहानी शुरू होती है।

अध्याय 1 — पहली विजय

“समझ की हर यात्रा एक छोटी-सी जीत से शुरू होती है, इसलिए नहीं कि वह सफलता को परिभाषित करती है, बल्कि इसलिए कि वह हृदय को यह विश्वास दिलाती है कि सफलता संभव है।”

फ्लैशबैक — स्मृति का क्षण

हजारीबाग, झारखंड | मई 1998

साइबर कैफ़े का पंखा ऐसे घरघराता था मानो कोई बूढ़ा आदमी सीढ़ियाँ चढ़ रहा हो। मई का मध्य था और गर्मी ने हजारीबाग में पहले से ही अपनी सालाना घेराबंदी शुरू कर दी थी। कमरा छोटा था, सिर्फ तीन कंप्यूटर, जो अपनी लगातार चलती आवाज़ में मानो थकान से कराहते कीड़े लगते थे। बाहर, चाय की दुकान से गरम समोसे की खुशबू भीतर आ रही थी। मैं दरवाज़े के पास खड़ा था, हाथ में अपनी रोल नंबर वाली पर्ची लिए। उसे मेरी माँ ने अपनी साफ़-सुथरी और अत्यंत सुव्यवस्थित लिखावट में लिखा था। सुबह उन्होंने केवल एक वाक्य कहा था, “अच्छे से चेक करके लाना।” न डर, न उत्साह। सिर्फ एक शांत-सा विश्वास। शर्मा जी, साइबर कैफ़े के मालिक, धीरे-धीरे टाइप कर रहे थे, उन उँगलियों की तरह जो जानते हों कि इंटरनेट अपनी ही मर्ज़ी से चलेगा, किसी जल्दी में नहीं। 56 kbps वही हमारी दुनिया थी और बोर्ड की वेबसाइट हम जैसे हजारों लड़कों से भरी पड़ी थी, जो उस एक क्षण का इंतज़ार कर रहे थे जो शायद उनकी जिंदगी की दिशा तय कर देता। पेज को खुलने में समय लग रहा था। स्क्रीन झिलमिला रही थी। दिल की धड़कन इतनी तेज़ थी, कि कानों में सुनाई दे रही थी। फिर अचानक स्क्रीन चमकी। अंकों की एक पंक्ति उभर आई।

गणित: 97, अंग्रेज़ी: 89, हिंदी: 77, विज्ञान: 99, सामाजिक विज्ञान: 88, कुल: 451/500। एक पल के लिए मैं वहीं ठिठका रह गया। साँस मानो कहीं बीच में अटक गई, अविश्वास और राहत के बीच प्रिंटर खड़खड़ाया और मेरा परिणाम काग़ज़ पर उतर आया। शर्मा जी ने ऊपर देखा, मुस्कुराया और कहा "बहुत अच्छा किया है, बेटा।" मेरे पास कोई शब्द नहीं थे। सिर्फ सिर हिलाया और बाहर आ गया। बाहर धूप तेज़ थी, पर मुझे हल्का-सा लग रहा था, मानो दुनिया कुछ बदल गई हो। गली वही थी, पुराना मंदिर, बरगद का पेड़, किताबों की दुकान,

धूल से भरा क्रिकेट का मैदान, कुछ भी बदला नहीं था। पर पता नहीं क्यों, सब कुछ बदला हुआ लगता था। मैं धीरे-धीरे घर की ओर चला, दोनों हाथों में वह प्रिंटआउट कसकर पकड़े। घर पहुँचा तो माँ पौधों में पानी दे रही थीं। उन्होंने मेरी तरफ देखा और एक ही झलक में सब समझ गई। मैंने कागज़ बढ़ाया। उन्होंने उसे दो बार पढ़ा, फिर धीरे से उस लोहे के डिब्बे में रख दिया जहाँ घर के सबसे महत्वपूर्ण काग़ज़ रखे जाते थे। उन्होंने न मुझे गले लगाया, न रोईं, न कोई ऊँची आवाज़ में खुशी जताई। बस बोलीं, "अच्छा किया है। अब याद रखना, यह अंत नहीं है, शुरुआत है।" शाम को पिताजी लौटे। कागज़ पढ़ा, और बोले "तैयारी शुरू करो।" रास्ता साफ़ दिख रहा था। हम जैसे छोटे शहरों के लड़कों के लिए यही सपना था, अच्छे नंबर, इंजीनियरिंग की कोचिंग और एक सीधी रेखा में ऊपर जाती हुई ज़िंदगी। उस रात मैं देर तक जागता रहा, उन अंकों को सोचते हुए जो अब एक दरवाज़े की तरह लग रहे थे।

पंद्रह साल की उस सरल उम्र में मैंने मान लिया था, सफलता अब आसान हो जाएगी। मेहनत → सफलता → खुशी। सीधी, सरल, निश्चित। लेकिन तब तक मैं नहीं समझता था कि जीवन सिर्फ ताकत नहीं परखता। यह आपकी निश्चितताओं को भी परखता है। आत्मविश्वास कोई मंज़िल नहीं, एक मौसम

है जो बदलता है। और एक दिन, उन्हीं अंकों की नींव भी हिलने वाली थी और मुझे फिर से सीखना था, कैसे खड़ा हुआ जाए। लेकिन वह सब बाद में हुआ। उस दिन मई 1998 की उस दोपहर मैं अजेय महसूस कर रहा था। उपसंहार उस शाम, पंखे की धीमी गूँज के बीच, मैंने कागज़ पर लिखे अंकों में केवल नंबर नहीं देखे, मैंने प्रयास की चमक देखी, माँ के विश्वास की गर्मी देखी और पिताजी की चुप्पी में छिपी उम्मीदें महसूस कीं। यह मेरी पहली विजय थी और इसी जीत ने जीवन से एक मौन वादा करवाया कि एक दिन, यह मुझसे पूछेगा क्या मैं वास्तव में जानता हूँ सफलता का अर्थ क्या होता है? वर्तमान में पहाड़ी पर बैठे लड़के ने भुवन की कहानी बिना टोके सुनी। हवा अब स्थिर थी, पेड़ों में हल्की सरसराहट थी। भुवन रुका, एक कथावाचक के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसे व्यक्ति की तरह जो अपने भीतर की हिलती हुई ज़मीन को एक बार फिर महसूस कर रहा हो। यह चढ़ाई पहाड़ की नहीं थी, यह समझ की ओर पहला कदम थी।

अध्याय 2 — विरोधाभासों का शहर

“घर छोड़ना सिर्फ़ एक नए शहर में कदम रखना नहीं होता, यह स्वयं के एक नए रूप में प्रवेश करना होता है।”

रांची, झारखंड | जून 1998 बोर्ड परीक्षा के परिणाम आने के बाद हज़ारीबाग के छात्रों के लिए अगला स्वाभाविक कदम था रांची जाना और वहीं से 10+2 की पढ़ाई करना। रांची के स्कूलों से पढ़े बच्चों के IIT/NIT में चयन की संभावना अधिक थी, यही विचार लेकर भुवन और उसके माता-पिताजी जून की शुरुआत में रांची के लिए रवाना हुए। बस अड्डा आवाज़ों, सामानों और उम्मीदों की एक अव्यवस्थित भीड़ था। भुवन अपने माता-पिताजी के बीच खड़ा था, सामने उसका लोहे का ट्रंक, जिसमें आने वाले दो वर्षों की लगभग हर जरूरत थी। यूनिफॉर्म, किताबें, बिस्तर और माँ की दुआएँ जो हर तह में चुपचाप समाई थीं।आसपास और भी परिवार थे, बच्चे पढ़ाई के लिए घर छोड़ रहे थे और माता-पिताजी विदा होने की कोशिश कर रहे थे, बिना कमज़ोर दिखे। रांची, हज़ारीबाग से केवल 95 किलोमीटर दूर था, पर भुवन को लगा मानो दो घंटे की इस यात्रा में जिंदगी पूरी तरह बदल गई हो। वह अब एक छोटे शहर का उच्च-प्रथम श्रेणी वाला लड़का नहीं था, अब वह सैकड़ों नए छात्रों में से एक था, जो रांची के प्रतिष्ठित स्कूलों में आए थे, अपनी-अपनी उम्मीदों और सपनों के साथ। भुवन को अन्य छात्रों के साथ एक डॉर्मिटरी में जगह मिली थी। सामान व्यवस्थित कर लेने के बाद अब वह क्षण आ गया था, जब उसके माता-पिताजी को हज़ारीबाग लौटना था, क्योंकि घर पर उसकी दो छोटी बहनें, आला और अवि, अकेली थीं। पिताजी ने उसके कंधे पर हाथ रखा और कहा “अच्छे से पढ़ना। हमें गर्व का अनुभव करवाना।” माँ ने कुछ नहीं कहा।

बस उसके कॉलर को आख़िरी बार ठीक किया, वह परिचित-सा स्पर्श जो भुवन की नसों में उतर गया और शायद माँ के भीतर कुछ

चुपचाप टूट भी गया। भुवन ने उनकी आँखों में नमी देख ली, हालाँकि उन्होंने खुद से वादा किया था कि स्टेशन पर आँसू नहीं बहाएँगी। उन्होंने उसे हमेशा मज़बूत, स्वतंत्र और संयमी बनाया था।आँसू, उस "सीख" का हिस्सा नहीं थे।

"मैं लिखूँगा, " भुवन ने कहा, लेकिन यह वाक्य उनके बीच अचानक फैल गई दूरी

को पाटने के लिए अपर्याप्त था। अगले कुछ ही सेकंडों में, जितने सेकंड उसे बस से उतरने, अपना बिस्तर ढूँढने और खिड़की से हाथ हिलाने में लगे। कुछ अनिवार्य बदल गया, वह एक छोटे शहर का पहली श्रेणी वाला लड़का नहीं रहा,

वह अब अपनी महत्त्वाकांक्षाओं द्वारा परिभाषित लड़का था। अच्छा हो या बुरा,

अब वह सिर्फ़ खुद के प्रति उत्तरदायी था।

रांची डी.ए.वी. श्यामली विद्यालय- जून 1998 का पहला सप्ताह, स्कूल की इमारत अपने आप में एक प्रभाव थी, ऊँची छतें, पत्थर की मेहराबें, लंबे गलियारे

और दशकों की शैक्षिक परंपरा का भार हर दीवार पर महसूस होता था। भुवन का हॉस्टल-रूम, एक लंबा-सा कक्ष था जिसमें बारह बिस्तर थे। बारह शहरों से आए बारह लड़के, हर किसी के मन में अलग डर, पर चेहरे पर एक जैसा दिखावा, **"मैं ठीक हूँ।"** भुवन का बिस्तर खिड़की के पास था। वहीं से स्कूल का क्रिकेट मैदान, असेंबली-ग्राउंड, और उससे आगे फैलता हुआ रांची अपनी लय में दिखाई देता था। यह सब सुंदर था, पर एक अनजानी-सी दूरी के साथ।

यह हज़ारीबाग जैसा नहीं था। यह अधिक व्यवस्थित, अधिक व्यस्त और अधिक प्रतिस्पर्धी था। पहले हफ्ते में ओरिएंटेशन, यूनिफॉर्म की फिटिंग और हॉस्टल के नियमों में ढलने की एक धीमी, पर थकाने वाली प्रक्रिया चली। लड़के एक-दूसरे को परखते हुए, अपनी झिझक छिपाते हुए, धीरे-धीरे अपने-अपने छोटे-छोटे मित्र-समूह बनाने लगे। हॉस्टल का अलिखित नियम काफी स्पष्ट था,

कक्षा 12 के सीनियर देवताओं जैसे थे।

कक्षा 11 के नए लड़के सिर्फ़ दर्शक।

सीखना, सुनना और बिना सवाल मानना था। भुवन को रवि, प्रदीप और संजय जैसे ही मिल गए, तीन लड़के, तीन शहरों से, तीन अलग-अलग संस्कृतियों से,

पर सभी एक ही दिशा में देखते हुए: **इंजीनियरिंग के सपने की ओर।** दूसरे ही दिन रवि ने घोषणा कर डाली। **"हम IIT क्रैक करेंगे**, **चारों टॉप IIT's में।"** रवि का आत्मविश्वास असर डालता था। भुवन के मन की सहज, तेज़ सोच, जो अक्सर बिना जाँच के निष्कर्ष बना लेती थी, भुवन ने इस घोषणा पर भी आसानी से विश्वास कर लिया। कक्षाएँ शुरू हुई और वह पहला सप्ताह भुवन के लिए आँख खोलने वाला साबित हुआ। गणित अब सरल अध्याय नहीं था, यह अमूर्त हो चुका था। भौतिकी अब बोर्ड पर बने चित्र नहीं, एक बिल्कुल अलग ब्रह्मांड था। रसायन विज्ञान याद और समझ, दोनों की मांग कर रहा था। और सबसे बड़ी चुनौती, **पढ़ाई की गति।** यह हज़ारीबाग के स्कूल से कहीं आगे, कहीं तेज़ थी। भुवन जल्दी ही समझ गया कि जो नींव वह अपने साथ लेकर आया था, वह इस नए माहौल की रफ्तार नहीं झेल पा रही थी।

उसके दोस्त आगे बढ़ रहे थे, रवि तीन अध्याय आगे, प्रदीप सवाल हल करता हुआ जैसे वह खेल हो, संजय पहले से व्यवस्थित नोट्स लेकर चलता था। भुवन, न फेल, न टॉपर, बस कहीं बीच में अटका हुआ। यह बुद्धि की कमी नहीं थी। यह शुरुआत की कमी थी, वह धीमी, संरचित लगन जो उसे घर में मिलती थी। अब वह अकेला था, और रांची ने उसे पहले हफ्ते में ही बता दिया था कि यहाँ सिर्फ़ नंबरों से सपने पूरे नहीं होंगे। समस्या बुद्धि की नहीं थी। भुवन पर्याप्त रूप से बुद्धिमान था। समस्या नींव में थी। कक्षा 10 में वह उन अवधारणाओं पर निर्भर था जिन्हें उसके अध्यापकों और नानाजी स्पष्ट और सरल तरीके से समझाते थे।

हज़ारीबाग से दूर बिताया गया यह वर्ष, परिवार के सहारे का अभाव, उस धीमे पर संरचित व्यक्तिगत मार्गदर्शन की कमी जो उसे घर में सहज मिल जाता था,

और उसके अपने अनचेक्ड, अनपरीक्षित आत्मविश्वास, इन सबने मिलकर उसके भीतर एक खाली स्थान छोड़ दिया था। वर्तमान में भुवन ठहर गया। उसकी नज़र स्मृति से लौटकर फिर उसी पहाड़ी ढलान पर टिक गई जहाँ वे दोनों बैठे थे। धीरे से वह बोला, “जो मैं अभी तुम्हें बता रहा हूँ… उस समय मैं खुद भी नहीं समझ पाया था। यह सब मुझे बहुत साल बाद समझ में आया। जब मैंने सीखा कि मन कैसे काम करता है।” वह आगे बोला, “सिस्टम 1 सोच, यह तेज़, सहज, बिना सोचे निर्णय लेने वाला मन, मुझे कक्षा 10 में आसानी से आगे ले गया। पर जैसा काह्नमैन लिखते हैं, सिस्टम 1 सोच शॉर्टकट लेता है और यह मान कर चलता है

कि पिछली सफलताएँ भविष्य में भी वैसे ही दोहराई जाएँगी। उसे इस बात का ज़रा भी अंदाज़ा नहीं होता कि नया माहौल, नई चुनौतियाँ और पढ़ाई का ऊँचा स्तर सिर्फ़ सहजता या गति से नहीं संभाला जा सकता।”

आत्मविश्वास डगमगाना फ्लैशबैक, स्मृति का क्षण बारिश उस वर्ष रांची पर मानो पूर्ण क्रोध के साथ उतरी थी। जून की तपती धूप में मज़बूत लगने वाली हॉस्टल की छत पहली ही भारी वर्षा में कमज़ोर पड़ गई। पहले एक कोने में टपकन, फिर दो, फिर तीन लड़कों ने अख़बार, पुराने तौलिये और जो भी मिल सके उससे उसे रोकने की कोशिश की। एक वरिष्ठ छात्र ने स्टाफ को मनाकर

बाल्टियाँ भी लगवा दीं। पर असली क्षति ईंट-पत्थर की नहीं थी, यह भुवन के भीतर हो रही थी। अगस्त के पहले हफ्ते में उसे ज़ोर की सर्दी-जुकाम हो गई।

कोई बड़ी बीमारी नहीं पर एक सप्ताह की पढ़ाई छूट गई। जब वह कक्षाओं में लौटा, तो पाया कि वह बाकी सभी से पीछे छूट चुका था। गणित अब त्रिकोणमिति में जा चुका था, एक ऐसा अध्याय जिसे उसने कभी पूरी तरह नहीं समझा था। भौतिकी विद्युत-स्थैतिकी पर थी। रसायन में ऑर्गेनिक की जटिल प्रतिक्रियाएँ आ चुकी थीं। "तू पकड़ लेगा, " रवि ने कहा, हालाँकि उसके चेहरे की थकावट बताती थी कि वह खुद भी संघर्ष कर रहा है। जून की शुरुआती चमक,

वही आत्मविश्वास जो सबके चेहरों पर दमकता था, अब धीरे-धीरे उतर रहा था।

पूरे विद्यालय में प्रतिस्पर्धा की कसक महसूस होने लगी थी। पर भुवन पकड़ नहीं पा रहा था। सितंबर के अंत तक मासिक परीक्षा के अंक आए 72%। पिछले महीने 81% थे। अंक मामूली रूप से कम थे, पर किशोर मन की गणित में यह गिरावट विनाश जैसी लगती है। उस शाम वह स्कूल की छोटी लाइब्रेरी में बैठा रहा, किताब सामने थी, पर पन्ने पढ़े नहीं जा रहे थे। आसपास लड़के ध्यान से पढ़ रहे थे, सीनियर्स धीरे-धीरे इंजीनियरिंग प्रवेश परीक्षाए की बातें कर रहे थे। पूरा वातावरण मानो भुवन से कह रहा था, "तुम पीछे रह रहे हो।"

हॉस्टल लौटकर वातावरण अचानक और गहरा हो गया। उस रात उसने सुना, रवि अपने पिताजी से हॉस्टल के पे-फोन पर बात कर रहा था। वह हँसते हुए कह रहा था, “85 मिला है… ठीक ही है। 90 चाहता था।” 85, जो भुवन के 72 से कहीं अधिक था, रवि के लिए “ठीक” था। भुवन अपने बिस्तर पर लेट गया और कई दिनों बाद पहली बार वह सचमुच डर गया। वर्तमान में भुवन ने धीरे से पूछा “तुम रोज़ कितने घंटे पढ़ते हो?” लड़के ने तीखे स्वर में जवाब दिया “अब इससे क्या फ़र्क पड़ता है?” भुवन ने कुछ नहीं कहा। बस थोड़ी देर चुप रहा, पहाड़ी की ढलान की ओर देखते हुए, जहाँ हवा धीमे-धीमे बह रही थी। फिर बोला, “तुम जानते हो… वह टपकती छत सिर्फ़ छत नहीं थी।” लड़का चौंका, पर चुप रहा।

भुवन की आवाज़ नरम थी, पर उसमें वर्षों का अनुभव था। “वह मेरे मन की छत थी। मैं समझ नहीं पाया था कि तेज़ी से बना आत्मविश्वास पहली बारिश में ही टपकने लगता है। हम अख़बार ठूँस देते हैं, बाल्टियाँ रख देते हैं, पर असली दरारें

अंदर कहीं छुपी रह जाती हैं।” वह हल्के से हँसा, एक ऐसी हँसी जिसमें दर्द भी था और समझ भी। “बहुत सालों बाद, जब मैंने काह्नमैन औरकैरल ड्वेक कोपढ़ा,

तब समझ पायाकि मेरा सिस्टम 1 सोच, वह तेज़, सहज सोचने वाला मन, उन दरारों को समझने में सक्षम नहीं था।वह बस बेचैन होकर टपकन रोकने में लगा रहा।” “जो मुझे चाहिए था, वह था सिस्टम 2 सोच, धीमा, धैर्यपूर्ण, विवेकशील चिंतन। जिस तरह मेरी माँ बाद में मुझे सिखाती रही, ठहर कर सोचना।” लड़का अब चुप था, पर उसकी साँसें हल्की हो चुकी थीं। “जीवन पहले कहानी देता है, ”भुवन फुसफुसाया, “शब्द बहुत बाद में देता है। बस… उसी को हम अनुभव कहते हैं।”

नियंत्रण खोता हुआ पल

फ्लैशबैक — स्मृति का क्षण नियंत्रण खोता हुआ पल

अगस्त आते-आते मानसून ने रांची को अपनी पूरी तीव्रता से घेर लिया था, और उसी महीने मेरे शैक्षणिक जीवन की पहली गंभीर गिरावट शुरू हुई। सितंबर की आधिकारिक अर्द्ध-वार्षिक परीक्षाएँ घोषित हो चुकी थीं। मेरे भीतर एक बेचैन-सी घबराहट थी और मैंने पढ़ाई में पहले से कहीं अधिक जुनूनी प्रयास करना शुरू कर दिया, देर रात तक जागना, कभी-कभी खाना छोड़ देना, बिस्तर पर किताबें फैला कर मानो किलेबंदी कर लेना। मेरे दोस्त भी ऐसा ही कर रहे थे, कक्षा 11 का पूरा सेक्शन प्रतिस्पर्धा की एक अदृश्य आग में धीरे-धीरे झुलस रहा था।

दूसरे हफ्ते भौतिकी के शिक्षक श्री वर्मा ने पिछले महीने का टेस्ट पेपर लौटाया, भुवन: 58/100, रवि: 78, प्रदीप: 81, संजय: 71, अगले दिन गणित का पेपर मिला, भुवन: 65, रवि: 88, प्रदीप: 79, संजय: 74। इन दो दिनों में एक नयी और कठोर सच्चाई हॉस्टल के वातावरण में घुलने लगी, एक अदृश्य पदानुक्रम बन चुका था। रवि सबसे ऊपर, प्रदीप उसके ठीक पीछे, संजय कहीं बीच में और मैं, धीरे-धीरे नीचे खिसकता हुआ। और यह गिरावट किसी एक दिन की नहीं थी। यह एक धीमी, अनजानी फिसलन थी, जहाँ पकड़ कमजोर पड़ती जाती है, और आपको पता भी नहीं चलता कि आप कब नियंत्रण खो बैठे। सिस्टम 1, मेरा तेज़, सहज, बिना रुके निर्णय लेने वाला मन, अब भी वही भ्रम दे रहा था कि सब ठीक हो जाएगा। पर सच्चाई यह थी कि जैसे-जैसे गणित और भौतिकी की अवधारणाएँ गहरी और अमूर्त होती जा रही थीं, मेरी नींव उनको संभाल नहीं पा रही थी। मैं जितना अधिक मेहनत करता, उतना अधिक बिखरता जाता। यह संघर्ष पढ़ाई का नहीं था, यह आत्मा की थकान थी। अगस्त के अंत तक स्वास्थ्य भी गिरने लगा, कोई बड़ी बीमारी नहीं, पर लगातार थकान, ध्यान टूटना और मन में बस एक बोझिला धुंध। फिर अक्टूबर

के आखिरी सप्ताह में एक ऐसी घटना घटी जिसने मेरे मन की गति को पूरी तरह बदल दिया। चिंतन-सूत्र: गिरावट एक दिन में नहीं आती। वह तब शुरू होती है जब हम समझने की जगह पहचान को पकड़ कर बैठ जाते हैं। जब हम परिचय को ही समझ मान लेते हैं।

माँ का पत्र — संबल

फ्लैशबैक — स्मृति का क्षण, 1999 में चिट्ठियाँ पहुँचने में कम-से-कम एक सप्ताह लगता था, कभी-कभी दो भी। अक्टूबर के दूसरे हफ्ते में मुझे माँ का पत्र मिला, उनकी वही परिचित, साफ़-सुथरी और धैर्य से भरी लिखावट में लिखा हुआ। मैंने लिफ़ाफ़ा धीरे से खोला, जैसे अंदर कोई नाज़ुक चीज़ हो।पत्र में लिखा था: मेरे प्यारे भुवन, आशा है तुम ठीक हो और मन लगाकर पढ़ रहे हो। तुम्हारे पिताजी को तुम पर गर्व है। मुझे भी है। तुम्हारे बिना घर थोड़ा खाली-सा लगता है। तुम्हारी वह शोर-शराबा, जिस पर मैं हर दिन डाँटती थी, आजकल बहुत याद आता है।एक बात बताना चाहती हूँ, बेटा। जब तुम छोटे थे, तो पढ़ाई में हमेशा सबसे तेज़ नहीं थे। कक्षा 3 में गणित से बहुत डरते थे।तुम्हारी टीचर ने कहा था

कि तुम थोड़े धीमे हो। लेकिन मैंने तुम्हारे भीतर कुछ और देखा था, हार न मानने का स्वभाव। धीरे-धीरे, रोज़-रोज़ अभ्यास से, तुमने वही गणित सीख लिया जिसे कभी असंभव मानते थे। कक्षा 11 मुश्किल होगी, कक्षा 10 से भी कठिन। लेकिन मैं तुम्हें जानती हूँ, भुवन। तुम्हारे भीतर मेहनत की एक क्षमता है जो बहुत कम लोगों में होती है। दूसरे लड़कों से अपनी तुलना मत करो। उनकी अपनी राह है,

तुम्हारी अपनी। अगर तुम संघर्ष कर रहे हो, तो इसका मतलब है कि तुम सीख रहे हो। और यही तो जीवन है, सीखते हुए आगे बढ़ना। पिताजी ने बहुत सारा

प्यार भेजा है। दिसंबर में घर आ सको तो ज़रूर आना। हम इंतज़ार करेंगे। तुम्हारी माँ। उस रात मैंने माँ का पत्र कई बार पढ़ा, और हर बार उनके शब्दों में एक नया ही अर्थ खुलता गया। माँ सही कहती थीं, कक्षा 3 में मुझे अंकगणित से सचमुच डर लगता था। मुझे धीमा कहा गया था। पर मैं धीमा बना नहीं रहा, मैंने धीरे-धीरे अपनी नींव को मजबूत किया था। अब असल सवाल यह था, क्या मैंने सच में सीखना कैसे सीखते हैं, यह सीखा था, या मैं सिर्फ़ उन तथ्यों तक सीमित था जिन्हें परीक्षाएँ माप लेती हैं? क्या मेरे भीतर वह समझ विकसित हुई थी जो ज्ञान की जड़ तक उतर सके, या मैं केवल रटने और दोहराने की क्षमता पर निर्भर था?

पिछले महीने पर नज़र डालते ही सच्चाई खुल गई, मैंने समझ की नहीं, व्याख्या की सुविधा पर भरोसा किया था। इस विश्वास पर टिक गया था कि मेरी स्मरणशक्ति कक्षा में कही हर बात को सँभाल लेगी और परीक्षा मेरी आधी-अधूरी समझ पर भी कभी न कभी दया कर देगी। लेकिन कक्षा 11 में इनमें से कोई भी सहारा निश्चित नहीं था। और तभी पहली बार, यह बात भीतर उतर गई कि सच्ची सीख किसी और के कंधों पर नहीं टिकती, उसे तो मेरे अपने कंधों पर ही खड़ा होना था। वर्तमान में “लेकिन मुझे अलग क्या करना चाहिए था? मैं समझ नहीं पा रहा था, ” भुवन ने धीमे स्वर में कहा। “पत्र ने उम्मीद तो दी… पर रास्ता नहीं।” भुवन हल्का-सा लड़के की ओर मुड़ा और बोला, “एक बात समझो। हम सोचते दो तरीकों से हैं, एक तेज़, भावनात्मक, जो तुरंत प्रतिक्रिया देता है;और दूसरा धीमा, ठहरा हुआ, जो सोच-समझकर निर्णय लेता है।इसीलिए कभी मैं प्रतिक्रिया करता हूँ, कभी चिंतन। और सच कहूँ, परिस्थिति के अनुसार दोनों ज़रूरी होते हैं।” वह आगे बोला, “मान लो, हॉस्टल की छत टपकने लगी। तब हमें तुरंत प्रतिक्रिया करनी पड़ी, अख़बार ठूँसकर, बाल्टियाँ लगाकर टपकन रोकनी पड़ी। लेकिन उन दरारों की मरम्मत सोच-समझकर ही हो सकती थी।

जब मन प्रतिक्रिया और चिंतन के बीच सही तालमेल बिठा लेता है, तब निर्णयों में मौजूद अधिकांश त्रुटियाँ कम हो जाती हैं।" यही संतुलन मन का कैलिब्रेशन है।

उसने लड़के की ओर देखते हुए कहा, "अब मान लो जिस स्थिति में चिंतन चाहिए था, तुमने प्रतिक्रिया दे दी— तो तुम्हारा निर्णय स्वाभाविक रूप से त्रुटिपूर्ण होगा। और जहाँ तुरंत निर्णय चाहिए, वहाँ अगर तुम सोचते ही रह गए, तो चिंतन का परिणाम प्रयोग करने का समय ही नहीं बचेगा।" वह रुका, फिर शांत स्वर में बोला, "उदाहरण लो, तुम परीक्षा में असफल हुए और शर्म के कारण किसी को बताए बिना इस पहाड़ी पर चले आए। यह प्रतिक्रिया थी, घबराहट से जन्मी। तुम्हें पहले यह ठहरकर सोचना चाहिए था कि गलती कहाँ हुई, कौन-सा तरीका कमज़ोर था, कौन-सी आदतें तुम्हें पीछे ले गईं। फिर जिस पर तुम भरोसा करते हो, उससे सलाह लेनी चाहिए थी।" भुवन ने आगे कहा, "परीक्षा में असफल होने के बाद तुम्हें यह सोचना चाहिए था कि असफलता के पीछे कारण क्या थे, पर चिंतन करने के बजाय तुम प्रतिक्रिया में बह गए और इस पहाड़ी पर चले आए। तुम्हें ठहरकर यह समझना चाहिए था कि ग़लती कहाँ हुई, फिर जिस पर तुम सचमुच भरोसा करते हो, उससे सलाह लेनी थी, कि कैसे सुधार कर आगे बढ़ा जाए। ध्यान रखना, चुनौतियों के समय खुद को तनहा मत करो। अलगाव पूर्वाग्रह बढ़ाता है। और भीड़ से मत पूछो, भीड़ शोर बढ़ाती है। दोनों ही निर्णय को ग़लत दिशा में ले जाते हैं।" भुवन ने लड़के की ओर तीखी-सी मुस्कान के साथ देखा और पूछा, "तो फिर बताओ… अगर अकेले भी नहीं रहना, और भीड़ से भी दूरी रखनी है, तो चुनौतियों में किस तरह आगे बढ़ें? जैसी चुनौती तुम अभी झेल रहे हो।" लड़के के चेहरे पर पहली बार हल्की मुस्कान आई। "अभी आपने जो कहा… थोड़ा अशरानी-स्टाइल डायलॉग लग रहा है, " वह हँसकर बोला, "शोले वाला।" भुवन भी मुस्कुरा पड़ा, और फिर अपने अतीत की कथा में दोबारा उतर गया।

आत्मबोध का शांत मोड़

फ्लैशबैक — स्मृति का क्षण, अर्द्धवार्षिकपरीक्षाएँ आकर चली गईं।

गणित में 68%, भौतिकी में 72%, रसायन में 65%। बुरे अंक नहीं थे, ससम्मान पास होने लायक। लेकिन यह वह विजय नहीं थी जिसकी कल्पना मैंने की थी। यह कक्षा 10 की सफलता का स्वाभाविक विस्तार नहीं था। रवि को कुल 84% मिले। प्रदीप को 81%, संजय को 76%। लेकिन इन परिणामों तक पहुँचते-पहुँचते मेरे भीतर कुछ महत्वपूर्ण बदल चुका था। उन अंकों पर मैं अब आतंकित या टूट नहीं रहा था, मैं सोच रहा था। धीरे, गहराई से, पहली बार बिना घबराए।

माँ के पत्र ने मेरे भीतर एक छोटी सी पर निर्णायक समझ जागृत कर दी थी, कि

गति से महत्वपूर्ण है गहराई। याद से महत्वपूर्ण है अर्थ। और प्रतिक्रिया से महत्वपूर्ण है चिंतन। पिछले महीनों की भागदौड़ के विपरीत, अब मैं कम पढ़ता था, पर धीरे, पर्याप्त ध्यान से, हर अवधारणा को भीतर तक उतरने देता। गणित अब प्रहार करने वाली समस्या नहीं, एक भाषा बनने लगा। भौतिकी सूत्रों की दीवारों से बाहर निकलकर दुनिया के नियमों की तरह समझ आने लगी। रसायन याद के बोझ से उठकर तर्क का अभ्यास बन गया। दिसंबर में जब मैं घर लौटा, माँ ने मेरी कॉपी देखी। कुछ देर तक चुप रहीं, फिर पूछा “अच्छे अंक हैं… पर तुम उदास क्यों हो?” मैंने कहा, “क्योंकि ये वो नहीं जो मैं चाहता था।” माँ की मुस्कान ठंडी हवा जैसी थी, “तुम्हें यह तय करना है कि यह तुम्हारी पूरी कोशिश का परिणाम है या परिस्थितियों का। उत्तर मिल जाए, तो रास्ता भी मिल जाएगा।”

उनके शब्द मेरी दिशा बन गए। अगले महीनों में मैंने अपनी पढ़ाई का तरीका बदला। तेज़ी नहीं, गहराई। दौड़ नहीं, समझ। प्रतिस्पर्धा नहीं, स्वयं की धैर्य-पूर्ण प्रगति। फरवरी में गणित 82% आया। मार्च में और बढ़ा। मैं रवि जैसा नहीं था, पर मैं अब वही नहीं था जो शुरुआत में था। रांची जो कभी डर की तरह लगता था, अब एक कठोर पर सच्चा शिक्षक बन गया था।

वर्तमान में भुवन ने पहाड़ी पर बैठे लड़के से कहा, "तुमने पूछा था कि अकेला भी न रहूँ और भीड़ में भी न पड़ूँ, तो क्या करूँ?" उसने धीमे स्वर में जवाब दिया, "किसी एक सच्चे व्यक्ति से सलाह लो। एक मन स्पष्ट होता है, कई मन भ्रमित।"

वह मुस्कुराया, "मुझे मेरी माँ मिली थी। हो सकता है आज तुम्हें… मैं मिल गया हूँ।" लड़का हल्का-सा मुस्कुराया, पहली बार। उपसंहार रांची ने भुवन को सिर्फ़ सूत्र और भौतिकी नहीं सिखाई, उसने उसे यह सिखाया कि ज़िंदगी में आगे बढ़ना अपने आत्मविश्वास को बार-बार पुनःनिर्मित करना है, उन जगहों पर जहाँ कोई आपका नाम भी नहीं जानता। किसी भी असफलता का तूफ़ान आराम की घमंड भरी जगह से उठता है, और हर नए विकास की सुबह विनम्रता से जन्म लेती है।

भाग II — संघर्ष से प्रयत्न तक

हर यात्रा में एक क्षण ऐसा आता है जब संघर्ष सिर्फ़ बोझ नहीं रहता, वह दर्पण बन जाता है। उस दर्पण में हम अपनी अधूरी कोशिशों, अपनी आधी-अधूरी समझ, और अपने अनियंत्रित भय को पहली बार साफ़-साफ़ देखते हैं। यहीं से प्रयत्न जन्म लेता है, वह प्रयत्न जो केवल मेहनत नहीं, सोच-समझकर की गई मेहनत होता है। संघर्ष अँधेरी गली है, पर प्रयत्न वह दीपक है, जो उसी गली को राह बना देता है। संघर्ष थकाता है, प्रयत्न दिशा देता है। और यही अंतर भुवन की कहानी के अगले अध्याय को परिभाषित करता है।

अध्याय 3 — संघर्ष की सतत राह

"विफलता बिजली की तरह गिरकर नहीं आती—
वह धीरे-धीरे, शांति से, उन दरारों से रिसती है
जिन्हें हम तब तक अनदेखा करते रहते हैं
जब तक वह पूरी जगह भर नहीं लेती।"

फ्लैशबैक — मार्च 1999 से मार्च 2000 | रांची

सर्दियाँ रांची पर उतर आई थीं, या शायद, जैसा भुवन को बाद में समझ में आया,

ठंड हमेशा थी, बदलना सिर्फ़ उसका दृष्टिकोण था। कक्षा 11 धीरे-धीरे बीत रही थी। दिसंबर में 68% से फरवरी में 78% तक की बढ़त ने भुवन के भीतर एक नाज़ुक-सी उम्मीद जगाई थी। वह सोचता था, अब उसने "कुंजी" पा ली है, गहराई से समझना, धीमा लेकिन स्थिर चिंतन, और बुद्धिमानी के साथ किया गया प्रयास, यह तीनों मिलकर उसे आगे ले जाएँगे। लेकिन 10+2 का सफ़र अलग होता है, दो वर्ष का फैलाव, दोनों कक्षाओं का संयुक्त बोझ, और बोर्ड की परीक्षाएँ, जो सिर्फ़ अध्याय नहीं जोड़ती, वह सोच का बुनावट देखती हैं। फरवरी तक उसकी मासिक परीक्षाएँ अच्छी रहीं। रवि—जो अब "स्वतः प्रतिभाशाली" नहीं रह गया था, ने भी माना कि भुवन की त्रिकोणमिति गहरी हो चुकी है, बस थोड़ी धीमी। फिर आया कक्षा 11 का अंतिम परीक्षा-पत्र, एक ऐसा दरवाज़ा जो या तो डिस्टिंक्शन की ओर खुलता या साधारण प्रमोशन की ओर या सबसे बुरे हाल में, दोहराव की ओर।

मार्च 1999 — कक्षा 11 की अंतिम परीक्षा

फ्लैशबैक — परीक्षा-हॉल, परीक्षा-हॉल में वही सन्नाटा पसरा था जो सिर्फ़ परीक्षा ही पैदा कर सकती है। पच्चीस लड़के, कुछ तेज़ी से लिखते हुए, कुछ प्रश्न-पत्र को ऐसे घूरते मानो वह उनके आर-पार देख रहा हो। भुवन बीच की पंक्ति में बैठा था। सामने गणित का प्रश्न-पत्र। तीन घंटे। बीस प्रश्न। कुल अंक: 100। उसकी कलम स्थिर गति से चलती रही। एक घंटे में बारह प्रश्न। दो घंटों में सोलह। आख़िरी चार, वे रचनात्मकता माँगते थे। ज्ञान के साथ-साथ यह सहज अंतर्ज्ञान कि कौन-सी राह चुननी चाहिए। उसने अंतिम पूरा घंटा उन्हीं पर लगाया। सिस्टम 2 सोच, धीमा, व्यवस्थित, विश्लेषणात्मक, पूरी तरह सक्रिय था। कई तरीक़े आज़माए गए, फिर छोड़े गए, फिर नए संयोजन में लौटे। दस मिनट बचे थे

जब दो प्रश्न गिर पड़े, हल हो गए। तीसरा और चौथा आख़िर तक जिद पर अड़े रहे। भुवन ने कलम रख दी, एक शांत आत्मविश्वास के साथ: “शायद अस्सी मिल जाएँ। सबसे अच्छा नहीं, पर ठोस।” फिर आया भौतिकी का पेपर। यह सिर्फ़ गणना की परीक्षा नहीं थी। यह थी, दुनिया कैसे चलती है, सिद्धांत व्यवहार से कहाँ मिलता है, समझ का असली रूप क्या है। उसने तैयारी की थी। समस्याएँ हल की थीं। वह अभ्यास में निपुण था। लेकिन यह पेपर मानो किसी ऐसे व्यक्ति ने बनाया था, जिसकी “कक्षा 11” की कल्पना पूरी तरह अलग थी।

प्रश्न 1: 45° पर 100 m/s की वेग से फेंका गया क्षेप्य, रेंज, उच्चता, उड़ान का समय। परिचित।

प्रश्न 2:

चुंबकीय क्षेत्र में चल रहे आवेशित कण, वक्रता त्रिज्या निकालो।

यह भी परिचित।

प्रश्न 3:

लोलक से g नापने का प्रयोग तैयार करो, त्रुटियाँ सूचीबद्ध करो, और उन्हें कम करने के तरीके सुझाओ। यहाँ आत्मविश्वास पहली बार डगमगाया। यह प्रयोगात्मक सोच माँगता था, त्रुटि-विश्लेषण, व्यावहारिक समझ और वह सूक्ष्म दृष्टि जिसका अभ्यास उसने बहुत कम किया था। सिद्धांत केवल आधा रास्ता था।

चालीस मिनट सिर्फ़ इसी प्रश्न में चले गए। उत्तर अधूरा लगता रहा, सतर्क, अस्पष्ट, मानो किसी अस्थिर सहारे पर टिका हो। इसके बाद पेपर एक ढलान-सा बन गया, जहाँ हर अगला प्रश्न थोड़ी और पकड़ छीन लेता। अस्पष्ट वाक्य, अपरिचित ढंग से पूछी गई बातें। कुछ ऐसे प्रश्न जो मानो उन क्षमताओं को जाँच रहे थे जिनका अभ्यास उसने नहीं किया था, या जिनके लिए उसने तैयारी ही नहीं की थी। वह हॉल से बाहर निकला, भीतर से खाली हो चुका। उसे लगा— समझ + प्रयास = सफलता। यह समीकरण आज पहली बार डगमगा गया। बुद्धि में कमी नहीं थी, तैयारी में थी। और शायद यह भी कि "समझ" वास्तव में है क्या। रवि कॉरिडोर में मिला, चेहरा तना हुआ। "ब्रूटल, " उसने बस इतना कहा, और वह एक शब्द उस पूरी परीक्षा का सबसे सटीक सार था। रवि ने थकी हुई साँस के साथ कहा, "वह लोलक वाला सवाल? लगभग ग्रेजुएट लेवल था।" भुवन ने पूछा, "तूने हल किया?" "कुछ लिखा है… ज़्यादातर हवा।" रवि ने कंधे उचकाते हुए जवाब दिया। यह सांत्वना नहीं थी। अगर रवि, जो अर्द्धवार्षिक परीक्षा में 88% लाया था, उस प्रश्न पर अटक गया, तो फिर भुवन की स्थिति का अंदाज़ा वह खुद ही लगा सकता था। इसके बाद रसायन का पेपर आया, पहला आधा सहज, दूसरा आधा कठोर, मानो कह रहा हो, "दौड़ोगे नहीं, तो गिरोगे।" हिंदी और अंग्रेज़ी, जो अब तक हमेशा एक

सुरक्षित आश्रय लगे थे, उस दिन तूफ़ान के बाद सिर्फ़ औपचारिक पड़ाव-से लग रहे थे। दो सप्ताह बाद परिणाम आया।

बुद्धिमत्ता उत्कृष्टता पर निर्भर करती है

पिताजी जी ने उस होस्टल के पे-फोन पर सुबह कहा था, "साइबरकैफ़े जाकर रिज़ल्ट देख आओ।" भुवन कंप्यूटर के सामने बैठा था। धीरे-धीरे स्क्रीन पर अंक उभरने लगे, गणित: 72, भौतिकी: 58, रसायन: 65, हिंदी: 80, अंग्रेज़ी: 75, कुल: 350/500, प्रतिशत: 70% सत्तर। यह संख्या उसे घूरती रही, एक ठंडी, असहज चुप्पी के साथ मानो कह रही हो, "तुम गिर गए हो।" कक्षा 10 में उसका स्कोर 90.2% था। अर्द्धवार्षिक परीक्षा में औसत 68% और अब, अंतिम परिणाम: 70%। सबसे गहरा घाव सिर्फ़ कुल अंक नहीं था, अंक का बंटवारा था। भौतिकी: 58, इंजीनियरिंग की राह का सबसे महत्वपूर्ण विषय, अब पास होने भर का संकेत दे रहा था। कमज़ोरी बुद्धि की नहीं थी, कमज़ोरी अभ्यास, गति, और समयबद्ध सोच की थी। उसने नींव तो बनाई थी, पर उस पर खड़ा ढाँचा हवा की हल्की मार से भी डोल जाता था।

होस्टल के पे-फोन पर पिताजी की आवाज़ उसने काँपती उँगलियों से पे-फोन का रिसीवर उठाया। पिताजी ने फोन उठाया, उनकी आवाज़ स्थिर,

पर भीतर एक अनकहा बोझ। भुवन ने कहा, "रिज़ल्ट आ गया है…" "कितना आया?" भुवन ने धीमे स्वर में बताया। कुछ क्षण चुप्पी रही। फिर पिताजी ने कहा, "तुम पास हुए हो। 12वीं में जाओगे।" भुवन ने संकोच से कहा, "पर पापा… अंक कम हैं। मैं ऊपर नहीं हूँ।" पिताजी की आवाज़ नरम थी, पर उसमें कठोर सच्चाई छिपी थी.., "नहीं, ऊपर नहीं पर तुम असफल भी नहीं हुए। कक्षा 12 अभी बाकी है।"

वह जानता था, यह सांत्वना नहीं थी। यह वास्तविकता थी। और उसी क्षण

उसे पहली बार महसूस हुआ, वह अब हज़ारीबाग का "बुद्धिमान लड़का" नहीं था। रांची में वह अब "साधारण" लड़का था। चोट सिर्फ़ संख्या की नहीं थी,

पहचान की नींव हिल गई थी।

माँ का प्रश्न — सटीक, तीखा, सत्य

कुछ हफ्तों बाद, जब वह दिसंबर में घर पहुँचा, माँ ने उसकी कॉपी खोली। वे कुछ पल चुप रहीं, फिर सीधे पूछा, "फ़रवरी में तुमने अच्छा किया था। अब क्या हुआ?" भुवन ने कहा, "पेपर कठिन था।" माँ ने उसकी आँखों में देखते हुए कहा, "सचमुच कठिन… या तुम उतने तैयार नहीं थे?" उसके भीतर कुछ टूट गया। या शायद, कुछ खुल गया। उसके पास उत्तर नहीं था। क्योंकि सच कहीं बीच में था:

- पेपर कठिन था,
- पर तैयारी और भी कमज़ोर।

उसने अवधारणाओं को टुकड़ों में समझा था। पर उन टुकड़ों को जोड़ने वाली अभ्यास की स्वचालितता, वह नहीं बनी थी। समझ थी, पर तेज़ी नहीं। ज्ञान था,

पर स्थितियों में लागू करने की क्षमता नहीं। नींव थी, पर ढाँचा कमजोर था।

वर्तमान में भुवन ने दूर खड़े मंदिरों के शिखरों की ओर देखा। सुबह की हवा पत्तों को हल्का-सा हिला रही थी, मानो प्रकृति स्वयं यह बातचीत सुन रही हो। धीरे, लगभग फुसफुसाहट की तरह, वह बोला, "जानते हो… जब हम किसी कठिन चुनौती से जूझकर बाहर आते हैं, खासकर तब, जब परीक्षा हमारे मन के मुताबिक नहीं जाती, तो हमारे भीतर एक बदलाव बहुत चुपचाप जन्म लेता है।" लड़का अब पूरी तरह उसकी ओर मुड़ा हुआ था, आँखों में प्रश्न और चिंता का मिश्रण। भुवन ने अपनी बात आगे बढ़ाई, "असुरक्षा धीरे-धीरे भीतर

जगह बना लेती है और असुरक्षा क्या करती है? वह प्रदर्शन को बिगाड़ देती है। धीरे, लेकिन निश्चित रूप से।" उसने लड़के की ओर देखते हुए कहा, "जब असुरक्षा बढ़ती है, तो हमारा आत्मविश्वास गिरने लगता है। जब आत्मविश्वास गिरता है, तो हमारा निर्णय कमजोर होता है। और कमज़ोर निर्णय और भी गलतियाँ करवाता है। यही चक्र धीरे-धीरे अवसाद की ओर ले जाता है।" वह रुका, उसकी आवाज़ में अब एक गहरी सच्चाई थी।

"इसलिए, " भुवन बोला, "जब तुम्हें हार का दर्द महसूस हो, चाहे वह अंकों में हो,

प्रतिष्ठा में, या आत्म-विश्वास में, तो उस दर्द को कहानी का अंत मत बनने देना। दर्द को कहानी का मोड़ बनने दो।" उसने बेहद शांत स्वर में कहा, "खुद से पूछो:

मैं यहाँ क्या सीख सकता हूँ? मैं आगे कैसे बढ़ सकता हूँ?

दर्द को नकारकर नहीं, बल्कि उसे अपने भविष्य को आकार देने में

उपयोग करके।" लड़के के चेहरे पर बदलाव उभरने लगा, उलझन से धीमी समझ की ओर। भुवन ने उसके हाव-भाव को पढ़ते हुए कहा, "उत्कृष्टता न तो पूर्णता है, न ही नंबर-वन होना। उत्कृष्टता है, परिवर्तन। धीमा, ईमानदार, स्थिर परिवर्तन।" एक क्षण की चुप्पी रही। फिर भुवन ने जोड़ा, "मैंने बाद में अनेक विद्वानों को पढ़ने के बाद समझा कि मेरे भीतर जो चल रहा था वह कमजोरी नहीं थी, वह समझने लायक एक स्थिति थी। मन की एक अद्भुत क्षमता है, बहता हुआ जल है वह। उसके भीतर नियंत्रण भी निर्मित है, और नियंत्रण का उपयोग इस बात पर निर्भर करता है कि हम अपनी मानसिक दिशा को कितना समझते हैं।" उसकी आवाज़ में अब गहराई थी, "मन का विकास व्यावहारिक रूप से

हमेशा सजीव होता है, धीमा, अदृश्य, और स्वाभाविक। यही कारण है कि हमारा मन 'अमाप्य' है, इसे मापा नहीं जा सकता, सिर्फ़ समझा जा सकता है।" भुवन ने धीरे से कहा, "और इस समझ के लिए कभी-कभी एक निःस्वार्थ मार्गदर्शक की आवश्यकता होती है, जो अँधेरे में भी तुम्हें दिशा दिखाए।" लड़के की आँखें पहली बार दर्द से नहीं, कृतज्ञता से भरी दिखीं।

नई शुरुआत

फ्लैशबैक — कक्षा 12 की शुरुआत अप्रैल 1999 में हुई।

डार्मेटरी वही था, वही पुराने लोहे के बेड, वही खिड़की जिसमें से मैदान दिखता था, वही सवेरे की प्रार्थना की घंटियाँ। पर भुवन बदल चुका था। कक्षा 11 के अंतिम परिणामों ने उसके आत्मविश्वास को हिला दिया था, इतना कि वह अपनी ही क्षमताओं पर सवाल उठाने लगा था। उसका मन थका हुआ था, उत्साह कम,

गति और कम। पढ़ाई अब उसके लिए नियमित दिनचर्या नहीं रही, वह एक मानसिक बोझ बन चुकी थी जो कंधों पर चिपक जाता था और कमरे तक उसका पीछा करता था।

धीमी शुरुआत पहले हफ्ते में नए अध्याय शुरू हुए, कैल्कुलस, इलेक्ट्रोमैग्नेटिज़्म और ऑर्गैनिक केमिस्ट्री। वह समझ तो रहा था, पर कुछ भीतर से टूट चुका था। जो समझता भी था, उसे काग़ज़ पर उतारने में पहले जैसी सहजता नहीं थी। वह लाइब्रेरी में बैठता, किताब खुली होती, पर पन्ने धुंध की तरह दिखते।

हर कुछ मिनट में ध्यान बिखर जाता। एक गहरी थकावट मन के किसी कोने में बैठी रहती। यह थकावट पढ़ाई से नहीं थी, यह गिरते आत्मविश्वास से थी।

स्कूल की चेतावनी

सितंबर आते-आते उसकी प्रगति और धीमी हो गई। गणित अब अनिश्चित और फिसलनभरा महसूस होने लगा, जैसे पकड़ में आता, और तुरंत फिसल जाता। फिर एक दिन होस्टल वार्डन ने बताया, “स्कूल ने घर पर पत्र भेजा है। तुम्हें कोचिंग करनी चाहिए।” वह चुप रह गया। यह चेतावनी नहीं थी, यह संकेत था कि उसकी नींव हिल चुकी है। भुवन उस शाम डॉर्म के बाहर बैठा रहा। आसमान में बादल छाए थे, और उसके मन में भी। उसे लगा, शायद वह इस स्तर के लिए बना ही नहीं था।

माँ का दूसरा पत्र — मोड़ की शुरुआत

अंदर रखे थे, स्कूल का पत्र, अख़बार की वह कतरन जिसमें टॉप करने वाले बच्चों के नाम थे, रवि, प्रदीप और नीचे की तरफ़ भुवन का नाम भी, मानो किसी शांत रोशनी में छिपा हुआ। उन सबके साथ थी उसकी माँ की एक सीधी, सच्ची और दिल छू लेने वाली चिट्ठी, “भुवन, स्कूल का पत्र आया है। गणित और भौतिकी में तुम्हारे मार्क्स गिर गए हैं। वे कोचिंग की सलाह दे रहे हैं। लेकिन बेटा, मुझे नहीं लगता कि यह बुद्धि की समस्या है। मुझे लगता है, तुम्हारा मन थक गया है। असली असफलता सिर्फ़ एक है, खुद पर से भरोसा खो देना। और मैं देख रही हूँ कि तुम पढ़ाई में नहीं, अंदर कहीं हार मान रहे हो। मैं तुम्हारी माँ हूँ, तुम्हें जानती हूँ। तुम अंकों से ज़्यादा मजबूत हो और अकेले पड़ने वाले दुख से भी। इसीलिए तुम्हारे पापा ने इस गर्मी में मिस्टर सूलू से तुम्हें पढ़ाने का इंतज़ाम किया है। यह इसलिए नहीं कि तुम गणित नहीं कर सकते, बल्कि इसलिए कि तुम अपने अंदर की ताकत को फिर से पहचान सको। कठिन समय तुम्हारी क्षमताओं को कम नहीं करता, वह सिर्फ़ तुम्हें यह दिखाता है कि तुम्हें कहाँ नया प्रयास करना है। तुम सक्षम हो, पर तुम्हें अपनी गति फिर

से पाना होगा।” घर आओ, भुवन। हम तुम्हें याद दिलाएँगे कि तुम वास्तव में कौन हो।” तुम्हारी

माँ। भुवन ने वह पत्र कई बार पढ़ा, हर बार कुछ नई बात समझ आई।

वर्तमान में — छतरी वाले पत्थरों तक की चढ़ाई

भुवन और लड़का ढलान चढ़ते हुए थोड़ा ऊपर तक पहुँचे, जहाँ बड़े, सपाट पत्थर थे जिनपर बैठना आसान था। हवा ठंडी थी, और पेड़ों के बीच चिड़ियों का संगीत तैर रहा था। कुछ क्षण चुप रहकर भुवन बोला, “मेरी ज़िंदगी में एक समय था, कक्षा 12 का, एक बेहद कठिन वर्ष के बाद, जब हर अंक एक फैसला-सा लगता था। परीक्षा में हाथ काँप जाता था। मन टूट रहा था, सिर्फ़ पढ़ाई नहीं,

आत्मा भी डगमगा रही थी। मैं सोचता था, अगर मैं सबसे अच्छा नहीं हो सकता,

तो फिर इसका मतलब ही क्या है?” वह धीमे से रुका, नज़र सामने की राह पर टिकाए हुए। “उस दौर में मेरी माँ के पत्रों ने मुझे रास्ता दिखाया। उन्होंने कभी मनोविज्ञान, माइंडसेट या बड़े-बड़े सिद्धांतों की बात नहीं की। वे बस लिखती थीं,

‘70% इंसानी है। असली हार छोड़ देने में होती है।’ वे समझती थीं कि अंकों से जूझना अलग बात है, और उम्मीद से जूझना बिल्कुल अलग। उनके शब्द, चाहे उस समय मैं पूरी तरह समझ नहीं पाया, मुझे मेरे भीतर वापस ले आए।”

एक हल्की हवा चली, और भुवन ने अपनी बात आगे बढ़ाई, “उस समय मुझे नहीं पता था कि विद्वान लोग इसे हानि-विमुखता (loss aversion) कहते हैं, यानि हम अपने पुराने स्वरूप को खोने से ज़्यादा डरते हैं, बजाय इस पर ध्यान देने के कि हमारे पास अभी भी क्या बचा है। मुझे तो बस इतना पता था कि मैं

अपने ही मापदंडों पर खरा नहीं उतर पा रहा था, और यही दर्द सबसे भारी था।" "माँ की सलाह मेरी जीवन-रेखा बन गई, कि प्रयास परिणाम से बड़ा होता है, कि कोई भी परीक्षा मेरी कीमत तय नहीं करती।" भुवन ने आगे कहा, "आज पीछे मुड़कर देखता हूँ, जब मैंने काह्नमैन, ड्वेक और कई महान लेखकों को पढ़ा, तब समझ में आया कि माँ की शांत, सरल बुद्धि वही बातें कह रही थी जो विद्वान लोग कई वर्षों बाद नाम देकर समझा रहे थे। उन्होंने मुझे सिखाया, प्रतिक्रिया और चिंतन के बीच संतुलन रखना, लगातार कोशिश करते रहना और तुलना के शोर को अपने दिमाग़ से बाहर रखना।" वह लड़के की तरफ़ मुस्कराया— "इसलिए अगर कभी तुम्हें आत्म-संदेह में खोया हुआ महसूस हो, या किसी एक बुरे दिन की वजह से अपने आप को गलत समझने लगो, तो याद रखना: ज्ञान हमेशा किताबों में नहीं मिलता। कई बार वह घर से मिलता है, पत्रों में, दया में, और उन कहानियों में जो तुम्हें सबसे ज़्यादा जानती हैं। बाद में जब तुम किताबें पढ़ोगे, तो महसूस करोगे कि जिन बातों को विद्वान शब्द देते हैं, तुम पहले ही उन्हें जी चुके हो। हम ऐसे ही सीखते हैं, पहले जी कर, फिर समझकर।" वह गहरी साँस लेकर बोला, एक याद मानो भीतर से उठ रही हो, "मेरी ज़िंदगी में एक ऐसा वर्ष आया था जब मैं घर लौटा था, विजय लेकर नहीं, बल्कि मदद की उम्मीद लेकर।

कई बार रास्ता आगे बढ़कर नहीं मिलता, रास्ता उन लोगों के पास लौटकर मिलता है जो तुम्हारे लिए हमेशा ताली बजाते रहे, चाहे तुम जीत रहे हो या गिर रहे हो। आओ, मैं तुम्हें बताता हूँ कि मेरे साथ क्या हुआ, और कैसे चीज़ें धीरे-धीरे बदलने लगीं।"

प्रयास का आरम्भ: पुनः उठने की शक्ति

फ्लैशबैक — आशा की लौं

हज़ारीबाग लौटते समय मेरे भीतर एक ही भावना थी, बेबस लेकिन सच्ची उम्मीद। मदद का वादा किया गया था। और सचमुच, मिस्टर सुलु आ गए।

मेरे माता-पिताजी ने कभी उन पर भरोसा नहीं छोड़ा था। सुलु सर ने मेरी हालत को ध्यान से देखा, और धीरे से बोले, "तुम्हारे अंक गिर गए हैं और मुझे लगता है

मुझे पता है क्यों। तुमने सोचना छोड़ दिया है, और चिंतित होना शुरू कर दिया है।" मैंने सिर झुकाकर कहा, "मैं पर्याप्त अच्छा नहीं हूँ। मैं प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाता। शायद मैं बस साधारण हूँ। "सुलु सर ने फिर पूछा, "क्या तुम्हें पता है कि मैंने तुम्हें कक्षा 10 में क्यों पढ़ाने का फैसला किया था?" मैंने सिर हिला दिया। वे बोले, "क्योंकि मैंने तुममें विकास देखा था। सिर्फ़ प्रतिभा नहीं, प्रतिभाशाली तो कई होते हैं। विकास तब होता है जब व्यक्ति संघर्ष करने की इच्छा रखता है, समझने की जिज्ञासा रखता है, सिर्फ़ अंकों की इच्छा नहीं रखता है।" वे कुछ क्षण चुप रहे, फिर बोले, "रांची ने तुम्हारा संदर्भ बदल दिया। तुम्हारे आसपास बहुत तेज़ बच्चे थे। तुम हर किसी की गति पकड़ने लगे, जबकि तुम्हारी आधार जानकारी, तुम्हारा सीखने का तरीका, और राँची में परिवार का सहारा न होना,

इन सबने तुम्हें उस गति के लिए तैयार ही नहीं किया था। इसका नतीजा क्या हुआ? घबराहट। लगातार घबराहट ने संदेह पैदा किया। संदेह ने आत्मविश्वास छीन लिया। और आत्मविश्वास की कमी सीखने की भूख को खा गई। अंत में,

मन का जड़ हो जाना यानी मानसिक लकवा।” उन्होंने गहरी साँस लेकर कहा, “इसे ठीक कैसे किया जाता है? धीमे होकर। यह सोचकर कि तुम क्या जानते हो और क्या नहीं जानते। सबसे कठिन पाठ अक्सर तभी शुरू होते हैं जब चीज़ें मुश्किल होने लगती हैं। संघर्ष का मतलब यह नहीं कि तुम सीख नहीं सकते, संघर्ष का मतलब है कि तुम किसी सच्ची सीख के बिल्कुल कगार पर हो।” अगले कुछ दिन सुलु सर ने मेरे साथ कम सवालों पर ज्यादा गहराई से काम किया, हर दिन बस दो या तीन प्रश्न। लेकिन उनमें अवधारणा, अनुभूति और जुड़ाव सब कुछ था। धीरे-धीरे आत्मविश्वास लौटने लगा, वह भोला आत्मविश्वास नहीं, बल्कि कमाया हुआ आत्मविश्वास यह समझ कि कठिनाई सोचने से खुलती है, घबराने से नहीं। अंतिम दिन सुलु सर ने मुझे एक जटिल प्रश्न दिया, जिसमें कैल्कुलस, ज्यामिति और बीजगणित तीनों एक साथ गुँथे हुए थे। मैंने उसे बीस मिनट में हल कर दिया। वृद्ध व्यक्ति सचमुच मुस्कुराए। “अच्छा, ” वे बोले, “लेकिन सबसे ज़रूरी, क्या तुमने समझा?” मैंने धीरे कहा, “हाँ।” और इस बार, मैं सच कह रहा था। मुझे पता था कि यह तरीका क्यों काम करता है, और कौन-से अन्य तरीके काम कर सकते थे। यह विचार किस जगह बैठता है बाकी विचारों की दुनिया में

वह भी समझ आ गया था। सुलु सर ने कहा, “तो अब तुम तैयार हो। सिर्फ़ पास होने के लिए नहीं, सीखने के लिए।” मैं रांची लौटा10+2 बोर्ड परीक्षाओं (मार्च 2000) के लिए। और इस बार, न कोई दिखावटी साहस था, न कोई झूठा आत्मविश्वास। बस एक स्पष्टता थी, धीमी, शांत, पर दृढ़। मैं रवि नहीं था। मैं पीछे रह गया था। बोर्ड की परीक्षाएँ कठिन होंगी, यह मैं जानता था। लेकिन अब मुझे यह भी पता था कि मैं समझ सकता हूँ। मैं बढ़ सकता हूँ। मैं आगे बढ़ सकता हूँ

बिना इसके कि अपनी ही गिरावट मुझे तोड़ दे। “60%” की गिरावट, (जो सच में 70% थी, पर किशोर मन हमेशा इसे 60 ही मानता है), ने मेरे भीतर कुछ

तोड़ा भी था और कुछ आज़ाद भी किया था। माँ, पापा और सुलु सर तीनों सही थे, असली असफलता सिर्फ़ हार मान लेना होती है। बाक़ी सब सीखने की प्रक्रिया का ज़रूरी दर्द है। वर्तमान में वे स्मृतियाँ धीरे-धीरे धुंधली हो गईं, उनकी जगह

पत्तों की सरसराहट और दूर मंदिर की घंटियों की मध्यम-सी ध्वनि ने ले ली। भुवन ने लड़के की ओर देखा, वह अब हाथों को कसकर पकड़े बैठा था और उसकी आँखों में छिपा हुआ दर्द अब छुपा नहीं था। दोनों के बीच एक शांत समझ मानो गुजर गई। भुवन ने धीरे से कहा, "यह तो बस शुरुआत थी…"

उपसंहार "जब उसके अंक गिर रहे थे, भुवन ने सीखा कि सबसे कठिन विषय पुस्तकों में नहीं लिखे होते, वे मन के भीतर लिखे होते हैं: धैर्य, दृढ़ता और बिना तालियों के उठ खड़े होने का साहस। कई बार गिरना उड़ान का विपरीत नहीं होता, वह उड़ान की तैयारी होता है।"

अध्याय 4 — अभियंता की दृष्टि

समझ तब शुरू होती है जब हम उत्तरों का पीछा करना छोड़ देते हैं, और उस संसार को देखना शुरू करते हैं जो उन्हें चुपचाप अपने भीतर सँजोए रहता है।

वर्तमान में भुवन ने आगे कहा, "यह तो सिर्फ़ शुरुआत थी। जब दुनिया तुम्हारे प्रति मधुर हो, तो आत्मविश्वास महसूस करना आसान होता है। लेकिन असली सीख तभी शुरू होती है जब दुनिया तुम्हें कठिनाई के रूप में जवाब देती है। जो आगे आने वाला था, वह सिर्फ़ अंकों के बारे में नहीं था, न ही केवल सीखने के बारे में, वह इस बारे में था कि हम कैसे सीखते हैं, कैसे देखते हैं, कैसे निरीक्षण करते हैं, और कैसे समझना शुरू करते हैं। उस दुनिया को जो हमारे चारों ओर चुपचाप उद्‌घटित होती रहती है।"

फ्लैशबैक — बोर्ड परीक्षाएँ

बोर्ड की परीक्षाएँ मार्च की शुरुआत में आईं। गणित के दिन जब भुवन परीक्षा-कक्ष में प्रवेश कर रहा था, उसके भीतर एक अजीब-सी स्पष्टता थी, वैसी स्पष्टता जो उसने इससे पहले कभी महसूस नहीं की थी। प्रश्न कठिन थे, लेकिन इस बार वे बाधाओं की तरह नहीं लगे। वे पहेलियों की तरह थे, हर प्रश्न समझ को परखने और लागू करने का एक नया अवसर। वह पूरे तीन घंटे लगातार लिखता रहा, बिना उस घबराहट के, बिना उस आत्म-संदेह के, जो कक्षा 11 की परीक्षाओं में उसके साथ रहते थे। परीक्षा-कक्ष से बाहर निकलते समय उसने वह अनुभव किया जो उसे शायद ही कभी हुआ था, एक ऐसा आत्मविश्वास जो दिया नहीं गया था, जिसे उसने कमाया था। एक महीने के बाद परिणाम आ गए,

भुवन: गणित 89, भौतिकी 84, रसायन 78, अंग्रेज़ी 82, हिंदी 79 कुल: 412 / 500 (82.4%) यह उसकी कक्षा में सर्वोच्च नहीं था, रवि 91% पर था, प्रदीप 88% पर, लेकिन यह उसके लिए कक्षा 11 की गिरावट से एक पूरी तरह का परिवर्तन था। और उससे भी महत्वपूर्ण, ये अंक सिर्फ़ काग़ज़ पर अंक नहीं थे। ये उस बदलाव का प्रतिबिंब थे जो भुवन की सोच में आ चुका था।

उसके पिताजी की प्रतिक्रिया शांत थी, “अच्छा। तुमने अच्छा किया।” माँ की प्रतिक्रिया थोड़ी लंबी और परिचित, “मैंने कहा था न।” उनकी यह सरल पंक्ति एक पूरी यात्रा का सार थी। अब उसके भीतर एक नई दृढ़ता और जिज्ञासा का अंकुर फूट चुका था— ऐसा अंकुर, जो उसे भविष्य में इंजीनियरिंग की राह चुनने की स्पष्टता दे रहा था। यह दिशा उसने किसी दबाव से नहीं, sबल्कि अपने भीतर जागी समझ और उत्सुकता से चुनी थी।

फ्लैशबैक : अप्रैल 2000 तक

प्रवेश परीक्षा के परिणाम आने शुरू हो गए थे। भुवन ने IIT/NIT की संयुक्त प्रवेश परीक्षा दी थी, वह परीक्षा जो देश के सबसे प्रतिष्ठित इंजीनियरिंग कॉलेजों के द्वार खोलती हैं। कागज़ पर देखा जाए तो ऐसा लगता था कि वह थोड़ा पीछे रह गया था। लेकिन उसके अपने मन में और मिस्टर सुलु की नज़र में, कुछ कहीं अधिक महत्वपूर्ण हुआ था। भुवन ने सिर्फ़ परीक्षाओं की तैयारी करने वाले छात्र की तरह सोचना नहीं सीखा था, वह इंजीनियर की तरह सोचना सीख रहा था,

- ☐ समस्या को देखना,
- ☐ सिद्धांतों को समझना,
- ☐ और समाधान की कल्पना करना।

और मिस्टर सुलु ने समझाया, "यहीं से असली यात्रा शुरू होती है। कॉलेज कौन-सा होगा, कोर्स कौन-सा होगा, रैंक क्या होगी, ये सब परिस्थितियाँ हैं। पूर्ण सफलता वह है जब तुम सोचना सीख जाओ।"

हज़ारीबाग और रांची | जून–दिसंबर 2000

फ्लैशबैक — अवलोकन का मौसम

सन् 2000 की गर्मियाँ भुवन के लिए सिर्फ़ अकादमिक सुधार का मौसम नहीं था, वे अवलोकन का भी मौसम था। सुबह और दोपहर का समय मिस्टर सुलु के साथ बीतता था, गहरी समझ, सीधे सिद्धांत, और लगातार अभ्यास। लेकिन दोपहर बाद उसके पास अचानक बहुत-सा खाली समय होने लगा, वह समय

जिसे उसका छोटा वाला रूप निःसंकोच और भी गणित के सवालों से भर देता।

पर इस बार, भुवन ने उन पलों को सिर्फ़ पढ़ाई से नहीं भरा। उसने ध्यान देना शुरू किया। उसने अपने पिताजी को देखा। नगर निगम में अकाउंटेंट के रूप में काम करने वाले उसके पिताजी घर आते ही पुराने अख़बारों पर बने ब्लूप्रिंट्स पर ड्राइंग बनाने लगते,

- ☐ पानी की आपूर्ति की योजनाएँ,
- ☐ ड्रेनेज प्रपोज़ल,
- ☐ भवनों के लेआउट।

उन्होंने कभी इंजीनियरिंग औपचारिक रूप से नहीं पढ़ी थी, पर उनकी सोच

पूरी तरह इंजीनियरिंग-मानसिकता वाली थी, समस्याओं को स्थानिक रूप में समझना, प्रणालियों और प्रवाहों को देखना और समाधान की कल्पना उन्हें लागू करने से पहले ही कर लेना। उसने अपनी माँ को देखा। घर के साधारण-

से दिखने वाले कामों में रसोई को व्यवस्थित करना, घर का बजट बनाना, बगीचे की योजना बनाना, वह जटिल ऑप्टिमाइज़ेशन समस्याएँ हल कर रही थीं।

- ☐ कम जगह में अधिक उपयोगिता कैसे लाएँ?
- ☐ सीमित संसाधनों को कई ज़रूरतों में कैसे बाँटा जाए?
- ☐ अनिश्चितताओं के लिए योजना कैसे बनाई जाए?

उनके हर काम में गणित की चुपचाप सक्रिय बुद्धि थी। और सबसे गहराई से, उसने मिस्टर सुलु को देखा। उनका चलना, उनका पढ़ाना, उनका किसी समस्या से गुज़रना, सब कुछ एक ऐसी शांति और तल्लीनता से भरा था जो शायद ही किसी किताब में पढ़ाई जा सके।

दोपहर की सैर

फ्लैशबैक: जुलाई तक आते-आते मिस्टर सुलु ने पूरी तरह भुवन की पढ़ाई की व्यवस्था बदल दी थी। अब पढ़ाई डेस्क पर बैठकर किताबों के साथ नहीं होती थी। वे दोनों हज़ारीबाग की गलियों में लंबी दोपहर की सैर पर निकलते। ऊपर से यह सैर थीं, हल्की चाल, ताज़ी हवा, और मिस्टर सुलु की वह आदत जो कहती थी कि ठहरा हुआ रक्त ठहरी हुई सोच का कारण बनता है। पर धीरे-धीरे भुवन को समझ आने लगा, ये सैर उसकी ज़िंदगी की सबसे गहरी गणित-शिक्षाएँ थीं।

एक दोपहर बाज़ार के पास नए निर्माण-स्थल को देखते हुए मिस्टर सुलु ने कहा, "वह इमारत देख रहे हो? ठेकेदार अभी उन स्तंभों की भार-सहन क्षमता का हिसाब लगा रहा होगा। वह गणित का इस्तेमाल कर रहा है, भले ही उसने औपचारिक रूप से कैल्कुलस न पढ़ा हो। वह वजन का अनुमान लगा रहा है,

लोड का वितरण समझ रहा है, और यह सुनिश्चित कर रहा है कि पूरी संरचना

ढह न जाए। यह, व्यावहारिक गणित है।" वे दोनों रुक गए। मिस्टर सुलु ने एक लकड़ी के टुकड़े से रेत पर एक मोटा-सा चित्र बनाया। उन्होंने कहा, "स्तंभों को

केवल दीवारों और छत का वजन ही नहीं सहना होता। उन्हें गतिशील बलों का भी सामना करना होता है,

- हवा का दबाव,
- छोटे झटकों में इमारत का हिलना,
- और समय के साथ आने वाले तनाव।

समझे?" फिर वे धीरे से बोले, "गणित कोई अमूर्त चीज़ नहीं है। यह वास्तविकता में जड़ें रखता है। हर सूत्र का जन्म किसी वास्तविक समस्या को हल करने के लिए हुआ है।"

एक और दिन, वे दोनों शहर की पानी की टंकी के पास से गुज़रे। मिस्टर सुलु ने कहा, "देखो, यह टंकी शहर के सबसे ऊँचे स्थान पर बनी है। यह भी गणित है,

- स्थितिज ऊर्जा,
- दबाव का सिद्धांत,
- ऊँचाई और जल प्रवाह के बीच का संबंध।

जिस इंजीनियर ने इसे डिज़ाइन किया, वह जानता था कि पानी हमेशा ऊँचाई से नीची जगह बहता है। इसलिए टंकी ऊपर बनाई गई।" मिस्टर सुलु जो कर रहे थे, भले ही उन्होंने कभी इसे स्पष्ट रूप से कहा नहीं, वह यह था कि वे भुवन को गणित को सूत्रों और प्रक्रियाओं के संग्रह के रूप में नहीं, बल्कि वास्तविक दुनिया का वर्णन करने वाली भाषा के रूप में देखना सिखा रहे थे। हर प्रमेय, हर सूत्र, हर अवधारणा कभी न कभी इसलिए जन्मी थी क्योंकि किसी व्यक्ति को दुनिया के काम करने के तरीके को समझने की आवश्यकता हुई थी। यह दृष्टिकोण, जिसे हम अभियंता की दृष्टि कह सकते हैं, भुवन के लिए सब कुछ बदल गया।

जब वह इन सैर के बाद वापस गणित की किताबों में लौटा, तो प्रश्न अब अमूर्त नहीं लगते थे। क्षेप्य गति का प्रश्न अब केवल समीकरणों की बाज़ीगरी नहीं था, यह समझने के बारे में था कि हवा में फेंकी गई वस्तु कैसे चलती है, कहाँ गिरेगी,

और कितनी ऊँचाई तक जाएगी। त्रिकोणमिति अब केवल अनुपात याद रखने का खेल नहीं रही, यह कोणों को समझने का विज्ञान बन गई और यह कि दूरी

बढ़ने पर वे कैसे बदलते हैं। धीमी, विश्लेषणात्मक सोच अब भी सक्रिय थी, लेकिन इस बार उसके पीछे एक उद्देश्य था, एक गहरी अर्थवत्ता थी, सिर्फ़ परीक्षा के लिए समस्या हल करने की नहीं, दुनिया को समझने की।

पुस्तकालय की खोज

फ्लैशबैक: अगस्त में, जब मैं पिताजी के पुराने अख़बारों और पत्रिकाओं का ढेर संगठित कर रहा था, तो उनमें से एक पुरानी, मुड़ी-तुड़ी-सी किताब मिली,

The Way Things Work, अस्सी के दशक का संस्करण, जिसमें साधारण मशीनों, लीवर, पुल्ली, ढलान, पेंच की रंगीन चित्रों के साथ उनके पीछे छिपे भौतिक सिद्धांतों की सरल व्याख्याएँ थीं। मैंने पूरी दोपहर उस किताब को पढ़ने में लगा दी और पहली बार मैंने पूरे मन से समझा कि भौतिकी क्यों मायने रखती है। दुनिया कैसे चलती है, इसके यांत्रिक सिद्धांतों को समझना कोई रहस्यमय विद्या नहीं, बल्कि वास्तविक समस्याओं को हल करने की मूलभूत बुद्धि है। उस शाम मैं वह किताब लेकर मिस्टर सुलु के घर पहुँचा। “यह मिला, ” मैंने किताब दिखाते हुए कहा। “क्या यही इंजीनियरिंग है? यह समझना कि चीज़ें कैसे काम करती हैं?” मिस्टर सुलु ने किताब को धीरे से खोला, जैसे किसी बहुमूल्य वस्तु को संभाला जाता है। कुछ पन्ने पढ़ने के बाद वे मेरी ओर देखकर मुस्कुराए।

“हाँ भी और नहीं भी, ” उन्होंने कहा। “यह इंजीनियरिंग का एक हिस्सा है, वह हिस्सा जो वास्तविक दुनिया से जुड़ता है। लेकिन इंजीनियरिंग सिर्फ़ समझना नहीं है। यह निर्माण भी है, इन सिद्धांतों को उपयोग करके नई चीज़ें बनाना,

नई समस्याएँ हल करना। बहुत से लोग समझ लेते हैं कि चीज़ें कैसे काम करती हैं, पर बहुत कम लोग उन चीज़ों की कल्पना कर पाते हैं जो अभी तक बनी ही नहीं हैं।” उन्होंने किताब मुझे वापस थमा दी। “इसे रखो। इसे पढ़ते रहना। और जब कभी तुम्हें यह समझ न आए कि गणित या भौतिकी क्यों पढ़ रहे हो, तो याद रखना: ये कोई अमूर्त खेल नहीं हैं। ये वे उपकरण हैं जिनसे मनुष्य दुनिया को आकार देता है।”

परिवर्तन की शुरुआत

वर्तमान में: भुवन ने कहा, “उस गर्मी के बाद मेरे भीतर कुछ बदल गया था।

यह कोई अचानक हुआ चमत्कार नहीं था, न ही कोई नाटकीय मोड़। यह कुछ वैसा था जैसे किसी लेंस को धीरे-धीरे घुमाया जाए, और अचानक दुनिया ज़्यादा साफ़ दिखने लगे।”

फ्लैशबैक — वापसी का नया अध्याय

जब मैं मार्च में कक्षा 12 की अंतिम बोर्ड परीक्षा देने रांची लौटा, तो मैं वह छात्र नहीं था जो दिसंबर में टूटा हुआ आत्मविश्वास लेकर हज़ारीबाग गया था। मैं अब भी सतर्क था, कक्षा 11 के अंकों का झटका मैंने भुलाया नहीं था। लेकिन इस बार सतर्कता के साथ उद्देश्य भी जुड़ गया था।

गणित की कक्षा में परिवर्तन कैल्कुलस की कक्षा में, जब शिक्षक डेरिवेटिव, इंटीग्रल और फंडामेंटल थियोरम पढ़ा रहे थे, तो मेरी सोच सिर्फ़ कदमों का पीछा नहीं कर रही थी। मैं पूछ रहा था, यह क्या वर्णित कर रहा है? डेरिवेटिव-

परिवर्तन की दर है, इंटीग्रल संचयन है, किसी चीज़ का धीरे-धीरे जमा होना। ये अमूर्त अवधारणाएँ नहीं थीं, ये तो वे आधार थे जिनसे हम दुनिया में होने वाले परिवर्तन को मॉडल करते हैं।

भौतिकी की कक्षा में जागरण - भौतिकी में भी सब कुछ एक नए ढंग से समझ आने लगा। यांत्रिकी (Mechanics) सूत्र याद करने का विषय नहीं रहा, यह समझने का विज्ञान बन गया कि बल पदार्थ पर कैसे कार्य करता है। ऊष्मागतिकी (Thermodynamics) अब कोई डराने वाली अमूर्त प्रणाली नहीं थी, यह ऊर्जा के रूपांतरण का विज्ञान था। विद्युतचुंबकत्व

(Electromagnetism) अब भ्रमित करने वाले वेक्टर और फील्ड नहीं, यह वह मूलभूत शक्ति थी जो ब्रह्मांड को एक साथ बाँधे रखती है।

समस्या-समाधान में परिवर्तन

मैं अब केवल समस्याएँ हल नहीं कर रहा था, मैं उन्हें समझ रहा था। जब भी शिक्षक किसी नई दृष्टि से सोचने को कहते, या किताब से बाहर जाकर अवधारणा को विस्तृत करने को कहते, मैं कर पाता था। मैं अब तेज़ या धीमा छात्र नहीं था, मैं वह छात्र बन रहा था जो प्रक्रियाओं से आगे बढ़कर उनके पीछे की तार्किक संरचना

समझने लगा था।

समापन उपसंहार

चीज़ों को समझने की प्रक्रिया में भुवन ने यह भी समझा कि वह स्वयं कैसे काम करता है। हर लीवर, हर धारा, हर समीकरण एक गहरी सच्चाई को प्रतिबिंबित करता है, कि ज्ञान तब तक शक्ति नहीं बनता जब तक वह धारणा में न बदल जाए। यही वह क्षण था जब उसके भीतर इंजीनियर की दृष्टि का जन्म हुआ, दुनिया को और स्वयं को दोनों को ऐसी प्रणालियों के रूप में देख पाने की क्षमता,

जो समझे जाने की प्रतीक्षा कर रही हों।

वर्तमान में भुवन ने लड़के की ओर देखा, ढाँढस बंधाने के लिए नहीं, बल्कि उसके अनुभव को मान देने के लिए। आसमान का रंग नीले इंडिगो से बदलकर दूधिया सफ़ेदी में बदल चुका था जब भुवन अपनी कहानी के अंतिम हिस्से पर पहुँचा। पंछियों ने धीमी, अनायास-सी सुरलहरियाँ शुरू कर दी थीं, और पेड़ों के बीच सुबह की हल्की धुंध घुलने लगी थी। चारों ओर की दुनिया चुपचाप

भोर से दिन में बदल गई थी, ठीक वैसे ही जैसे उस लड़के के भीतर डर धीरे-धीरे शांत दृढ़ता में बदल गया था। लड़के ने धीरे से कहा, "सर... मेरा नाम आरव है। मेरे पिताजी भभुआ, कैमूर ज़िले में स्टेशनरी की दुकान चलाते हैं। माँ सरकारी स्कूल में पढ़ाती हैं। उन्होंने मेरे लिए सब कुछ किया... लेकिन जब मैं फेल हो गया, तो...

मैं समझ ही नहीं पाया कि उनका सामना कैसे करूँ।" वह रुक गया, लेकिन इस बार नज़रें नहीं चुराईं। "जब आप बोल रहे थे... तो ऐसा लग रहा था जैसे आप मेरी ही कहानी सुना रहे हों।" भुवन बिना टोके सुनता रहा। उस ईमानदारी में सुबह की मेहनत का सबसे पहला फल था। "तुम बहुत कुछ अकेले ढोते आए हो, " भुवन ने नरमी से कहा। "कभी-कभी डर सिर्फ़ इसलिए बढ़ता है क्योंकि हम उसे किसी से बाँटते नहीं हैं।" आरव ने सिर हिलाया। उसकी आँखों से धुंध धीरे-धीरे उतरने लगी। "अच्छा लगा, सर, " वह फुसफुसाया। "मुझे नहीं पता था कि असफलता का कोई मतलब भी हो सकता है।" भुवन मुस्कुराया, एक शांत, भरोसा देती मुस्कान। ऐसी मुस्कान जो उत्तर का दावा नहीं करती, बस साथ होने का संकेत देती है। "चलो, " वह उठते हुए बोला। "चलकर लौटते हैं। लगभग नौ बजने वाले हैं।" दोनों ढलान उतरने लगे। नीचे मंदिर की घंटियाँ अपनी सुबह की ताल में बज रही थीं और कुछ घरों की चूल्हों से उठता धुआँ हवा में घुल रहा था। भुवन थोड़ा आगे-आगे चल रहा था, संकरी पगडंडी दिखाते हुए। "तुम्हारा हॉस्टल, शांति लॉज।" लड़का चौंक गया। हाँ सर... आपको कैसे पता?" भुवन हल्के से हँसा। "तुम छात्र हमेशा वहीं रहते हो।

वह मेरे घर से बस तीन सौ मीटर दूर है। अगर तुम चाहो, सुबह पाँच बजे के आसपास आ जाना, शांति से चलने के लिए यही समय अच्छा है। या फिर शाम को सात बजे के बाद, जब शहर धीमा हो जाता है। मेरे घर का दरवाज़ा हमेशा खुला रहेगा। "आरव हिचकिचाया, फिर धीरे से पूछ बैठा" और... क्या

आप मुझे और बताएँगे? जब आपने इंजीनियरिंग की तैयारी शुरू की थी… उसके बाद क्या हुआ?" भुवन हल्का सा हँस पड़ा, अपनी प्रसन्नता छुपाते हुए। लड़का खुलने लगा था, डर का बादल धीरे-धीरे हट रहा था। "अच्छा, वह हिस्सा…" वह बोला। "वह तो ज़रा लंबी कहानी है। अगले रविवार शाम 6:30 या 7 बजे आ जाना। घर पर चाय बनाएँगे, और वहाँ से आगे बढ़ेंगे।" आरव उस सुबह पहली बार मुस्कुराया, सच्ची मुस्कान। छोटी, लेकिन दृढ़। वे दोनों अंतिम मोड़ तक साथ चले, चाय की दुकान के पास से, पुराने बरगद के मोड़ से गुज़रते हुए, जब तक कि उनका रास्ता दो दिशाओं में बँट नहीं गया। भुवन ने इशारा किया, "तुम्हारा लॉज वहीं है और मेरा घर इस गली के ऊपर। रविवार को आना।" "हाँ सर, " आरव ने कहा, "और धन्यवाद आज के लिए!" भुवन उसे जाते देखता रहा, कंधे सीधे, कदम हल्के। लड़का ठीक नहीं हुआ था, पर अब टूटने से नहीं डर रहा था। भुवन अपने घर की ओर मुड़ा, सोचते हुए उस चाय-सत्र के बारे में जो इंतज़ार कर रहा था, कहानियों से भरा हुआ, जो अभी कहे जाने के लिए तैयार थीं, बस सही श्रोता की प्रतीक्षा में। और कई वर्षों बाद उसे एक दुर्लभ संतोष का अनुभव हुआ, किसी को बिल्कुल उस क्षण देख पाने का जब उसका आंतरिक कम्पास सूक्ष्म रूप से सही दिशा में लौटने लगता है। 9 बजे, वे दोनों अलग-अलग रास्तों से चले, एक ऐसे रविवार की आशा के साथ जो उन्हें स्मृतियों की उस गहराई तक ले जाएगा जहाँ अगला अध्याय

उनकी प्रतीक्षा में था।

भाग ||| —
जीवन-यात्रा का निर्णायक मोड़

अध्याय 5 — बिखरी हुई रैंकिंग्स

जब दुनिया रैंक की पूजा करने लगती है, तो सत्य सबसे पहले शहीद होता है।

पूर्वाग्रह फुसफुसाता है, शोर निर्णय लेता है, और आत्मा अपनी ही आवाज़ भूल जाती है।

गया | रविवार की शाम, अक्टूबर 2025

सूरज धीरे-धीरे आसमान से अपनी पकड़ ढीली कर रहा था जब आरव भुवन की गली में पहुँचा। शाम की नरम पड़ती रोशनी में हर चीज़ शांत लग रही थी, मानो दुनिया ने लंबी साँस लेकर खुद को हल्का कर लिया हो। गली के मोड़ पर भुवन का सादा-सा घर खड़ा था, मटमैली क्रीम दीवारें, पुरानी लकड़ी की खिड़कियाँ थी। बरामदे की खुली हवा में उबलती चाय की पत्तियों की सुगंध बह रही थी, जिसमें मिलकर किसी पड़ोसी द्वारा पानी दिए जाने की गीली मिट्टी की महक और भी गहरी हो गई थी। आरव फाटक पर रुका, हिचकिचाहट से नहीं, बल्कि इस शांत एहसास के साथ कि वह उस जगह में प्रवेश करने वाला है जो पहले ही

उसे भीतर से बदलने लगी थी। अंदर, भुवन दो स्टील के गिलास एक छोटे, बेंत के बने मेज़ पर रख रहे थे। ये वे औपचारिक कप नहीं थे जो मेहमानों के लिए निकाले जाते हैं, ये रोज़मर्रा के मज़बूत और सादगी भरे गिलास थे, जो बातचीत शुरू हो जाने के बाद भी चाय को देर तक गरम रखते थे। गेट पर खड़े आरव को देखते ही भुवन मुस्कुराए, हल्की, पर उस गर्माहट से भरी जो बताती है कि इस क्षण की प्रतीक्षा वे पहले ही कर रहे थे। "आओ, " उन्होंने कहा। "बिल्कुल समय पर पहुँचे हो।" आरव बरामदे में कदम रखा, और दीवारों पर सजी पुरानी किताबों, स्कूल की ट्रॉफियों और दशकों की शांत, सच्ची जिंदगी

समेटे हुए तस्वीरों को धीरे-धीरे देखता रहा। “बैठो, ” भुवन ने कहा, दोनों के लिए चाय डालते हुए। ऊपर फैली पत्तियों के बीच से कोमल शाम की रोशनी छनकर फर्श पर हल्की, चलती हुई आकृतियाँ बना रही थी। “मुझे नहीं पता था… आना चाहिए या नहीं, ” आरव ने धीरे से कहा। “और फिर भी तुम आ गए, ” भुवन ने उत्तर दिया। “यही सबसे महत्वपूर्ण बात है।” कुछ क्षणों तक वे दोनों चुप रहे। यह वह चुप्पी नहीं थी जो अजनबियों के बीच होती है, यह वह धीमी विराम थी जब दो मन एक ही लय में आ बैठते हैं। भुवन ने चाय की चुस्की ली, जैसे स्मृतियाँ कप के तल में पड़ी पत्तियों की तरह धीरे-धीरे ऊपर उठने लगी हों। “हाँ, ” उन्होंने लम्बी साँस लेते हुए कहा, “तुमने पूछा था कि इंजीनियरिंग की तैयारी शुरू करने के बाद मेरे साथ क्या हुआ।” आरव थोड़ा आगे झुक गया, मानो कोई किताब खुल रही हो। वे दोनों एक हफ्ते से इस क्षण की प्रतीक्षा कर रहे थे। भुवन ने डूबती शाम की रोशनी की ओर देखते हुए कहा, “जो आगे आता है… वह सिर्फ़ अंकों या कॉलेजों की कहानी नहीं है। वह उस यात्रा की कहानी है जब दुनिया तुम्हें एक तरीके से मापती है, और तुम खुद को एक बिल्कुल अलग तरीके से।”

उत्थान–पतन का चक्र

वर्तमान में भुवन ने धीरे साँस ली, मानो अतीत को फिर से ऊपर आने का अवसर दे रहा हो।

फ्लैशबैक — इंजीनियरिंग परिणाम दिवस

इंजीनियरिंग का रिज़ल्ट जिस दिन आया, उस दिन न कोई गर्जना हुई, न कोई नाटकीय मोड़, न कहानी की तरह कोई चमत्कार, न किसी उम्मीद की हल्की-सी चमक। बस एक हठी, दबाने वाली मॉनसून की नमी, जो घर के हर कोने, हर दीवार, हर सोच तक धीरे-धीरे रिसती चली जाती थी। मेरी तैयारी में

अनुशासन के साथ बनाई गई सुबह की दिनचर्या थीं, अलार्म की सख्त घड़ियाल, दाँत ब्रश करते हुए मानसिक चेकलिस्टों की लंबी कतारें, सोने से ठीक पहले तक समीकरण और प्रायिकताएँ मेरे मन को पीछा करती रहीं। मेरी कॉपियाँ इन महीनों के बोझ की गवाह थीं, ग्रेफाइट के धब्बे, फटे पन्ने, कॉफ़ी के दाग, और कठिन सवालों के बगल में उम्मीद के छोटे सितारे। सब कुछ, इस एक दिन के लिए। मेहनत और किस्मत दोनों की परीक्षा के लिए। सुबह-सुबह मैंने वेबसाइट में लॉगिन करने की कोशिश की, घबराए हुए हाथ मेरे शांत दिखने वाले चेहरे को झूठा साबित कर रहे थे। सर्वर बार-बार क्रैश हो रहा था, “Result not found.” मैंने दोस्तों को फोन मिलाया। खबरें टुकड़ों में आने लगीं, बिखरी हुई, अस्पष्ट। रवि, मेरा वफादार प्रतियोगी, वह निकाल गया। मेरा नाम नहीं था। मैं स्क्रॉल करता रहा, बार-बार, मानो मेरा हठ हक़ीक़त को झुका देगा। इधर-उधर बधाइयों की बारिश शुरू हो गई, वे लड़के भी पास हो गए जो साल भर मुश्किल से पढ़े थे, “ज़िला टॉपर” जैसी फुसफुसाहटें शहर में घूमने लगीं। मेरा परिणाम खोजने का सिलसिला अचानक खत्म हो गया, और मैं उतना ही सूना महसूस कर रहा था जितना खिड़की के बाहर खड़े वे गर्मियों के अंजीर के पेड़। रात का खाना ख़ामोशी में बीता, अजीब नहीं, बस भारी। पिताजी खाना खाकर अपने खाते संतुलित करने में लग गए। माँ ने बिना कुछ पूछे चुपचाप मेरी थाली भर दी। अपने कमरे में, जहाँ बीमार-सी ट्यूब लाइट मद्धम रोशनी फैला रही थी, मैं अपनी ‘सर्टिफिकेट वॉल’ को घूरता रहा, ओलंपियाड का ब्रॉन्ज, स्कूल क्विज़ विजेता, विज्ञान प्रदर्शनी का पहला पुरस्कार, अब वे सब मुझे ही चिढ़ा रहे थे, जैसे किसी और युद्ध के पदक, न कि उस युद्ध के जिसकी गिनती होती है। मैंने सोचा, “क्या यह सारी मेहनत बेकार थी?” “क्या मेरी कीमत एक ही परीक्षा, एक रैंक, या किसी सूची में छूटे नम्बर से तय होती है?” वर्तमान में चाय थोड़ी ठंडी हो गई थी, पर उनके बीच

की गर्माहट और गहरी हो चुकी थी। आरव अनजाने में थोड़ा आगे झुक आया, जैसे वह जानकारी नहीं, सच सुन रहा हो।

सफलता के अदृश्य निर्धारक

वर्तमान में भुवन ने धीरे से साँस ली, ऐसे जैसे किसी पुराने कमरे में फिर से प्रवेश कर रहा हो, जहाँ दीवारों पर अब भी स्मृतियों की गूँजें टँगी हों। "कक्षा 12 के बाद, " उसने शुरू किया, "दुनिया को लगता था कि अब जाकर कहानी को स्पष्ट दिशा मिलनी चाहिए। लेकिन कई बार सबसे बड़ी उलझन वहीं से शुरू होती है जहाँ स्पष्टता शुरू होने की उम्मीद होती है।" आरव ने धीरे से सिर हिलाया। और भुवन उस क्षण में लौट गया जब रैंकिंग्स धीमी भूकम्पों की तरह उसके जीवन में आई थीं।

फ्लैशबैक — शहर की प्रतिक्रिया

शहर ने वैसे ही प्रतिक्रिया दी जैसे छोटे शहर देते हैं, दुष्टता से नहीं, रस्म के तौर पर। रिश्तेदारों के फोन आए, पर बातचीत से साफ़ था कि उनकी सच्ची दिलचस्पी किसी और बच्चों के परिणाम में थी। बाज़ार के दुकानदारों ने पूछा, "कोशिश तो किया था, ना?" हलवाई ने उसे एक समोसा पकड़ाते हुए कहा, "अगले साल, बेटा। तू तो होशियार है।" मैंने मुस्कुराने की कोशिश की, लेकिन भीतर एक शांत क्रोध और एक अनकहा शोक धीरे-धीरे उगने लगा। यह सिर्फ़ हार नहीं थी, यह किसी तरह का विश्वासघात था। रवि का नाम, उसकी तस्वीर, और उसकी नई साइकिल, सब हर जगह दिखाई देने लगे। हर स्कूल असेंबली में, हर शिक्षक की बातचीत में, हर माता-पिताजी की कहानी में, मेधावी होने की पूजा की जा रही थी, ऐसे जैसे मेहनत हमेशा इनाम ही देती है। मैं अब इस भ्रम के आर-पार देख सकता था, शहर की यह गाथा उस दुनिया पर नहीं बनी थी जो सच में मौजूद थी, बल्कि उस दुनिया पर जो वह चाहता था कि मौजूद

हो। वर्तमान में भुवन रुका, फिर आरव से बोला, “असफलता के उन क्षणों में आत्म-संदेह धीरे-धीरे भीतर मन में घर करने लगता है और आत्म-विकास को रोकने लगता है।इन्हीं क्षणों में मनुष्य को अपने लक्ष्य तक पहुँचने की यात्रा की समीक्षा करनी चाहिए क्योंकि यात्रा का विश्लेषण भाग्य को आकार देता है, परिणाम नहीं। मुझे इस बात का सौभाग्य मिला कि मेरे परिवार और मेरे शिक्षक दोनों ऐसे थे जिन्होंने मेरे भाग्य की दिशा बनाई और एक–दो असफलताओं को मेरी पहचान बनने नहीं दिया।” वह आगे बोला, “आज कई शोध बताते हैं कि असफलता स्वयं में अयोग्यता का प्रमाण नहीं होती। असफलता कई कारकों का परिणाम होती है। उन कारकों का विश्लेषण इसलिए आवश्यक है कि अगली कोशिश पहली कोशिश से बेहतर हो सके।” भुवन ने एक क्षण रुककर जोड़ा, “डेनियल काह्नमन की किताब में लिखा है, ‘क्योंकि मूल्यांकन में नॉइज़ मौजूद है, इसलिए परिणाम को कभी भाग्य का अंतिम निर्धारक नहीं माना जा सकता।’ समाज का एक वर्ग इसे ‘बौद्धिक आत्म-क्षमा’ कहकर उपेक्षित कर देगा। लेकिन उन पुस्तकों को पढ़ने के बाद मेरे भीतर एक प्रश्न उठा, क्या परिणाम को तय करने वाली सिर्फ़ मेहनत ही होती है?” मुझे आज भी याद है, सौरव, मेरा मित्र, गणित की परीक्षा वाले सप्ताह तेज़ बुखार से पीड़ित था, उसकी सावधानी भरी लिखावट एक अस्त-व्यस्त जल्दबाज़ी में बदल गई थी। प्रिया, जो मुझसे एक बैच ऊपर थी, उसने पेपर का अपना सबसे अच्छा सेक्शन छोड़ दिया, क्योंकि इनविजिलेटर की घड़ी दस मिनट तेज़ चल रही थी। नमन, जो कभी-कभी लापरवाह रहता था, उसका भाग्य ऐसा थाकि जिस पेपर मेंसबसे कठिन प्रश्न आए, वे उसी के सबसे मजबूत अध्याय थे। अक्सर परीक्षा-कक्ष, सीट, घबराहट, बीमारी, और परिस्थितियों की आकस्मिकता, ये सभी भाग्य नहीं थे। ये नॉइज़ का अदृश्य हाथ थे। और फिर बात आती है पूर्वाग्रह की, “होशियार लड़के, ” “शहर के बच्चे, ” “अच्छे परिवार”, रैंकिंग्स हमेशा समुदाय की कहानियों की इन अदृश्य छननियों से

गुजरती थीं। समय के साथ मैंने समझा, वे पूजनीय सूचियाँ सिर्फ़ प्रतिभा से नहीं बनतीं, बल्कि छिपे हुए पक्षपातों और अनदेखे नॉइज़ से भी। भुवन ने शांत स्वर में कहा, "हर कहानी ऐसी ही होती है, किसी ने हमें इस आकस्मिकता के लिए कभी तैयार नहीं किया। एक दिन लगता है जैसे हम अपनी जिंदगी को स्वयं दिशा दे रहे हैं; और अगले दिन हम खुद को एक पत्ते की तरह पाते हैं जो ऐसी हवा में उड़ रहा है जिसकी दिशा खुद पेड़ों को भी नहीं पता। प्रणाली की क्रूरता यही है, हम एक ऐसे खेल के हिस्से हैं, जिसका पासा पूर्वाग्रह के भार से झुका होता है और नॉइज़ की अनियमितता से डगमगा उठता है। ये ताकतें उस क्षण अदृश्य रहती हैं, पर पीछे मुड़कर देखने पर निर्दयी रूप से स्पष्ट।"

सहजता की सीमाबद्ध राह

वर्तमान में आखिरी घूंट चाय पीकर भुवन ने अपनी बात आगे बढ़ाई, "जब राज्य इंजीनियरिंग प्रवेश परीक्षाओं के परिणाम आने लगे, तो मुझे सरकारी और निजी, दोनों कॉलेजों में इंजीनियरिंग सीटों के विकल्प मिले। एक यात्रा का अंत हमेशा दूसरी यात्रा की शुरुआत होता है, अपने साथ नए निर्णय, नई चुनौतियाँ लेकर।"

फ्लैशबैक — जून 2000 का दबाव

"जून बीतते-बीतते, " भुवन ने कहना जारी रखा, "एक नया दबाव पैदा हुआ। सरकारी कॉलेज में लेदर टेक्नोलॉजी हर कोई यही कह रहा था, 'सरकारी सीट!'

'पक्का भविष्य!' पिताजी पड़ोस के घर दावत से लौटे तो उनके हाथ में ब्रॉशर थे, जिनमें सरकारी कॉलेजों के स्थिर करियर, सम्मान और आकर्षक वेतन के गुण गाए गए थे। चाचा-ताऊ दहेज-गणित करने लगे। पड़ोसी 'भविष्य के इंजीनियर' से दोस्ती पक्की करने की चालें चलने लगे। और मैं? मैं अपने

दिमाग में चार साल कल्पना कर रहा था, रसायनों के बड़े-बड़े टैंक, चमड़े की प्रोसेसिंग पर अंतहीन व्याख्यान, 'हाइड्स' पर चर्चा, और ऐसे विषय जिनमें मेरा मन कहीं टिकता ही नहीं था। मैंने गर्व महसूस करने की कोशिश की, पर वह गर्व एक तरह का समर्पण लग रहा था। मुझे याद आया कैसे प्रोग्रामिंग मेरी सोच को खोलती थी,

पहेली, नवाचार और सृजन का रोमांच। जुनून और व्यावहारिकता बरसात की बिजली की तरह टकरा रहे थे। लखनऊ का एक निजी इंजीनियरिंग कॉलेज, नया, साधारण, मुझे कंप्यूटर साइंस दे रहा था। जोखिम था, हाँ। लेकिन यही वह शाखा थी जो मेरे भीतर उत्सुकता की बिजली जगाती थी। 'सम्मानित' सरकारी विकल्प के सामने यह कदम मूर्खता-सा लगता था, शायद विद्रोह भी। हर रात

परिवार में बहसें होतीं, पिताजी "प्लेसमेंट ग्राफ और पेंशन लाभ" गिनाते। माँ

चुप रहतीं, तनाव को महसूस करते हुए, और मेरे पसंदीदा दाल में थोड़ा और घी डाल देतीं। वर्तमान में आरव की चाय भी खत्म हो चुकी थी। भुवन, अब एक मार्गदर्शक की तरह बोला, "देखो आरव, मैंने जो घटना तुम्हें सुनाई, उसका मकसद यही है कि हर निर्णय, हर जजमेंट, पूर्वाग्रह और नॉइज़ दोनों से प्रभावित होता है। पूर्वाग्रह और नॉइज़ की पहचान करना और उन्हें कम करना, यही श्रेष्ठ निर्णय की कुंजी है। आदर्श परिस्थिति यह होगी कि पूर्वाग्रह और नॉइज़ पूरी तरह हट जाएँ। ऊपर जो घटना मैंने बताई, उसमें पूर्वाग्रह दो रूपों में था, पहला: यह विश्वास कि सफलता का सिर्फ़ एक ही रूप होता है। दूसरा: यह कि तुम्हारी 'प्रतिष्ठा' तुम्हारा रास्ता तय करे। और नॉइज़? वह सब, जो किसी को दिखाई नहीं देता, पर हर कोई सहता है, आकस्मिक घटनाएँ, उलझी परिस्थितियाँ, जो परिणामों को चुपचाप मोड़ देती हैं। विकास वह है जो मैं इन दोनों के बावजूद

चुनना चाहता हूँ, और चुन सकता हूँ।" माँ की शांत, सहज बुद्धि वर्तमान में

भुवन ने चायदान की ओर इशारा किया। "अगली परत के लिए तैयार?" आरव ने हल्के से सिर हिलाया, स्वीकृति और उत्सुकता दोनों के साथ। कप दुबारा भरने के बाद वे फिर से बैठ गए, अतीत की उन सीखों को सुनने के लिए जो अभी भी

अपनी गहराई में उनके इंतज़ार में थीं।

फ्लैशबैक — माँ की सहज दूरदृष्टि

एक शाम, जब मानसून की हवा रसोई की खिड़कियों को झकझोर रही थी, माँ ने मेज़ साफ की, कुर्सी खींचकर मेरे पास बैठीं, उस शांत आत्मविश्वास के साथ जो संख्याओं और सलाहों से परे सच्चाइयों को देख लेता है। "मुझे पता है कि तुम कंप्यूटर साइंस चुनना चाहते हो, बेटा, " उन्होंने शुरुआत की। "कंप्यूटर की बात करते समय तुम्हारी आँखें अलग तरह से चमकती हैं।" मैंने तर्क देना चाहा, "लेकिन माँ, सब कह रहे हैं कि लेदर वाला कॉलेज बेहतर है। सीनियर्स, यहाँ तक कि पापा भी…" उन्होंने मेरा सिर सहलाया, नरमी से, पर एक अदृश्य दृढ़ता के साथ। "हर माँ–बाप अपने बच्चों को सच में नहीं देखते लेकिन मैं देखती हूँ। जब तुम छोटे थे, रेडियो खोलकर देखते थे कि अंदर क्या है। टूटता था, फिर भी जोड़ने की कोशिश करते थे। यह जिज्ञासा, यही तुम हो। अंकों के लिए नहीं, बल्कि यह समझने के लिए कि चीज़ें कैसे चलती हैं।" मैंने कुछ नहीं कहा, बस झुंझलाहट में पलकों को झपकाता रहा। माँ ने बात जारी रखी, उनकी सहज बुद्धि

डेढ़ दशक की परवरिश से और भी पैनी हो चुकी थी, "जानते हो, कई लोग जीवन में सफल क्यों होते हैं? सिर्फ़ इसलिए नहीं कि उन्होंने बड़े कॉलेज चुने। बल्कि इसलिए क्योंकि जब कठिन चुनाव सामने आया, उन्होंने वह रास्ता चुना जो उन्हें भीतर से जगा देता था, भले ही दुनिया कुछ और कह रही हो। मैंने ऐसे

लड़कों को देखा है जो 'सुरक्षित रास्ता' चुनकर बहुत जल्दी बूढ़े हो गए। और बहुत कम,

पर ज्यादा खुश, जो उस कठिन राह पर चले जिसकी फुसफुसाहट उनके दिल ने की थी।" वह रुकीं। बाहर बारिश अब हल्की हो चुकी थी। "कभी-कभी सही सहज बुद्धि माँ का वरदान होती है। मैं तुम्हें जानती हूँ। दुनिया को भी। प्रतिष्ठा ज़रूरी है, हाँ। लेकिन जो काम तुमसे प्रेम कराता है, वह तुम्हें ज्यादा लंबे समय तक और ज्यादा दूर लेकर जाएगा। कंप्यूटर साइंस बढ़ेगा और तुम उसके लिए बने हो। दूसरे लोग रैंक और आराम का पीछा करें, तुम उसका पीछा करो जिसके लिए तुम मेहनत करने को तैयार हो।" वर्तमान में भुवन ने आरव से कहा, "यह भावना का तर्क पर हावी होना नहीं था, बल्कि वह भावना थी जो वर्षों की छोटी-छोटी निरीक्षणों और गहरे भरोसे से जन्मी थी। "विशेषज्ञ इसे अफ़ेक्ट हीयूरिस्टिक की सबसे प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति कहते हैं।" भुवन ने आगे समझाया, "मैंने बच्चों को पढ़ते, उत्तरों में जीतते और असफल होते देखा है। हमेशा कोई न कोई यह कहता है कि सब कुछ भाग्य है। पर हवा भी होती है, बरसात भी, और वे रास्ते भी जो कभी चुने ही नहीं गए। बुद्धिमत्ता केवल परिणामों का पीछा करने में नहीं है, और न ही नॉइज़ के आगे समर्पण करने में। बुद्धिमत्ता इन दोनों को देख पाने में है, और फिर भी अपनी कहानी खुद चुन लेने में।" उसने एक शांत दृढ़ता से कहा, "अगर तुम सिर्फ़ नॉइज़ सुनोगे, तो खुशी खो दोगे। और अगर सिर्फ़ पूर्वाग्रह सुनोगे, तो खुद को खो दोगे। सफलता तब जन्म लेती है जब हम

अपने लक्ष्य की ओर किए गए प्रयास में संतोष ढूँढ लेते हैं।" ये शब्द किसी शिक्षक की पाठशाला से कहीं गहरा उतर गए। आरव ने सिर हिलाया, पहली बार

उसे अपनी ज़िंदगी एक कहानी की तरह दिखी, न कि एक स्कोरकार्ड की तरह।

चाय की गर्मी धीरे-धीरे उनके बीच फैल रही थी और भुवन ने अपनी जीवन-यात्रा

आरव को आगे सुनानी शुरू की। कुर्सी पर बैठे आरव ने धीरे-धीरे स्वीकार करना शुरू किया कि भाग्य परिणामों से बड़ा होता है, और भाग्य को आकार लेने में समय लगता है। उसने भुवन की ओर देखा, जैसे वह केवल एक कथाकार नहीं, बल्कि एक ऐसा मार्गदर्शक हो जो उसके भविष्य की दिशा धीरे-धीरे आकार दे सकता है।

फ्लैशबैक

भुवन ने कहा, "जुलाई के अंत तक दो राह बिल्कुल स्पष्ट हो चुका था, एक ओर था सरकारी कॉलेज का प्रतिष्ठित नाम, जिसके साथ स्थिरता, स्वीकार्यता और समाज की स्वीकृत राहों का मानचित्र मिलता था; और दूसरी ओर निजी कॉलेज,

जो जोखिम से भरा था, पर उसी में मेरे भीतर की जिज्ञासा और जुनून जलते थे।

मेरे पास कोई पूर्ण उत्तर नहीं था। लेकिन माँ की सहज दूरदृष्टि और तर्क तकनीक के प्रति मेरी अपनी जिज्ञासा से सशस्त्र होकर मैंने साहस के साथ कंप्यूटर साइंस चुन लिया, संख्याओं और मतों की कोलाहल भरी दुनिया में यह एक छोटा-सा कदम था, पर मेरा अपना। आख़िरकार, जैसा माँ ने कहा था, "कुछ सीख तब ही गहराई से मिलती है जब तुम सूचियों का पीछा छोड़कर अपने भीतर उठते प्रश्नों को सुनते हो।" और यूँ वह अध्याय समाप्त हुआ, किसी रैंक से नहीं, किसी प्रवेश परीक्षा की विजय से नहीं, बल्कि एक अनिश्चित पर सच्ची आशा से, इस समझ के साथ कि मापने वाली छड़ों और बदलते बादलों वाली दुनिया में तुम्हारी अपनी कीमत वही चीज़ है जिसे केवल तुम आकार दे सकते हो।

वर्तमान में भुवन कुर्सी पर थोड़ा पीछे झुके, मानो कोई पुरानी स्मृति शांत नदी की तह में धीरे-धीरे बैठ रही हो। "उन चार वर्षों ने मुझे वह सिखाया जो कोई पाठ्यक्रम नहीं सिखा सकता, " उन्होंने कहा। "कुछ पाठ तर्क से हल होते हैं, पर कुछ चुप्पी में जीने पड़ते हैं।" आरव ने फुसफुसाकर कहा, "और आपने दोनों सीखे।" भुवन हल्के से मुस्कुराए, "आसान नहीं था, न ही हमेशा सुंदर। लेकिन हाँ, मन परतों में सीखता है।" कुछ क्षण तक दोनों चुप रहे। कमरा एक गर्म-सी स्थिरता से भरा था, कुछ चाय की सुगंध, कुछ स्मृतियाँ, और कुछ अनकही पर दोनों को समझ आने वाली बातों से। शाम कब गहराई हो गई उन्हें पता भी न चला। बाहर रात की हवा ठंडी हो चुकी थी, बगीचे से मोगरे की हल्की महक अंदर तक आ रही थी। भुवन धीरे-धीरे उठे। "चलो, " उन्होंने कहा। "रात का खाना खा लो। कहानियाँ

तभी अच्छी चलती हैं जब पेट शांत हो।" आरव उनके पीछे भीतर चला आया। घर धीमी, घरेलू गर्माहट से चमक रहा था, दीवार पर पुराना कैलेंडर, मेज़ पर एक पीतल का दीया, रसोई से आती बर्तनों की नरम खनक। वे दोनों बिना जल्दबाज़ी के खाना खाते रहे। आरव को एक अनजाना अनुभव हुआ, ऐसी सहजता जिसमें कोई अपेक्षा नहीं, ऐसी मार्गदर्शन जिसमें कोई निर्णय नहीं। जब खाना समाप्त हुआ,

भुवन ने कोमल स्वर में कहा, "आरव, कभी-कभी मन को खुद को समझने के लिए दृश्य बदलने पड़ते हैं। अगले सप्ताह अगर फुर्सत हो, मेरे साथ बोधगया चलना।" आरव चौंककर ऊपर देखने लगा। भुवन ने आगे कहा, "महाबोधि मंदिर जाएँगे। फिर जापानी मठ। वहाँ एक लॉन है, इतना शांत कि अपनी उलझन की आवाज़ भी धीमी पड़ जाती है। वहीं मैं तुम्हें अगला हिस्सा बताऊँगा, इंजीनियरिंग के चार वर्ष, उनकी खोजें, उनकी सफलताएँ एवं विफलताएँ, और वे हिस्से जिन्हें मैं स्वयं में पहचानता भी नहीं था।" आरव की आँखें चमक उठीं, "मैं आऊँगा, सर।" "अच्छा, " भुवन ने ताजी-सी दृढ़ता से

कहा। “अब जाओ। आज रात खुद को तौलकर मत सोना। कल से समर्पण के साथ पढ़ना, रैंक के लिए नहीं, लय के लिए।” आरव ने सिर हिलाया, दरवाजे की चौखट को सम्मान से छुआ और रात की हवा में बाहर निकल गया। उसके कदम पहले से हल्के थे, साँसें पहले से स्थिर। भुवन उसे शांति लॉज की ओर जाते हुए काफी देर तक देखते रहे। लड़का अब डर के बोझ से नहीं टूट रहा था, वह उद्देश्य के साथ आगे बढ़ना शुरू कर चुका था।

समापन उपसंहार

पहली बार भुवन ने यह पूछना छोड़ दिया, ‘मैं असफल क्यों हुआ?’ और पूछना शुरू किया, ‘मैंने क्या सीखा?’ इसी प्रश्न में उसकी स्वतंत्रता छिपी थी। क्योंकि अंक परिणामों को माप सकते हैं, पर मूल्य, वह केवल चिंतन ही माप सकता है।

अध्याय 6 — तर्क और जीवन के बीच की दिशा

कुछ जगहें प्रश्न नहीं मिटातीं, वे दृष्टि बदल देती हैं। और मन की परिपक्वता उत्तर खोजने से नहीं, मौन को स्वीकारने से आती है।

वर्तमान में | जापानी मठ, बोधगया

रविवार एक धीमी साँस की तरह आया। भुवन और आरव छायादार पगडंडी से होकर जापानी मठ की ओर बढ़ रहे थे, जहाँ बादलों की रेशमी परत के पीछे सूरज की रोशनी मुलायम पड़ रही थी। मठ शांत, अपरिवर्तित खड़ा था, उसकी पगोडा नुकीले किनारे देर दोपहर की रोशनी को चुपचाप पकड़ते हुए। कहीं भीतर से घंटी की आवाज़ आई, एक साफ़, सोच-समझकर रखी गई ध्वनि, जो धातु के घनघनाने से कम और विचार के आकार लेने जैसी अधिक लग रही थी।

वे खुले लॉन पर पहुँचे। घास कटी हुई, ओस-सी मुलायम, और अविश्वसनीय रूप से शांत थी। यहाँ तक कि हवा भी सम्मानपूर्वक चलती महसूस हो रही थी। दो भिक्षु आँगन पार कर रहे थे, उनके वस्त्र शांत लहरों की तरह हिलते हुए। आरव रुक गया। “सर… यहाँ कुछ अलग लगता है।” भुवन ने सिर हिलाया, “यह स्थान

मन को अधिक सटीकता से समझता है जितना अधिकांश लोग समझते हैं।”

दोनों एक पत्थर की बेंच पर बैठ गए। पेड़ के पत्ते हल्की आवाज़ों में सरसराए, लेकिन उन सरसराहटों में एक प्राचीन लय थी। कुछ क्षण तक वे दोनों चुप रहे।

फिर भुवन बोले, “पिछली बार मैंने तुम्हें बताया था कैसे रैंकिंग्स टूट गईं… और कैसे नॉइज़, पूर्वाग्रह और आकस्मिकता मेरी राह को मोड़ती चली गई।”

आरव ने सिर हिलाया। भुवन ने आगे कहा, उनकी आवाज़ में मठ की शांति की मुलायम आभा थी, "आज मैं तुम्हें बताऊँगा कि इंजीनियरिंग के चार वर्षों में मैंने खुद को कैसे फिर से बनाया। प्रतिभा से नहीं… बल्कि अवलोकन से, गलतियों से, अनुशासन से और उस शांत साहस से जिसके बारे में मुझे खुद भी पता नहीं था

कि वह मेरे भीतर था।" आरव आगे झुक आया, ठीक वैसे ही जैसे वह चाय की बैठक में झुका था, सलाह पाने नहीं, समझ पाने के लिए। और भुवन की कहानी का अगला अध्याय धीरे-धीरे खुलने लगा। "कुछ सीखें एल्गोरिदम में कोड नहीं की जा सकतीं, उन्हें मौन में महसूस करना पड़ता है।"

लखनऊ, उत्तर प्रदेश | अगस्त 2000 – सितम्बर 2004

लखनऊ का इंजीनियरिंग कॉलेज कैंपस रांची DAV श्यामली जैसा बिल्कुल नहीं था, न वर्षों की परंपरा, न सुसंगठित अकादमिक गरिमा, न वह गहराई जो समय के साथ किसी संस्थान की दीवारों में बस जाती है। यहाँ नए बनाए गए भवन थे, कच्ची, अधूरी-सी बनावट वाले, मानो संस्थान स्वयं अपनी पहचान ढूँढ रहा हो। कैंपस शहर की सीमा से बाहर कभी कृषि भूमि रहा होगा और अगस्त में भारतीय गर्मी की दोहरी मार झेल रहा था: भीषण गर्मी और बेतहाशा नमी।

मेरे कमरे का आकार लगभग 12×10 था, और उसे मुझे दो और लड़कों के साथ साझा करना था। दोनों लड़के लगातार बातचीत में लगे रहते थे, कौन सा कोना किसका होगा, कौन-सी शेल्फ किसे मिलेगी, कौन-सा चार्जिंग सॉकेट किस डिवाइस के लिए सुरक्षित रहेगा। एक था निखिल, दिल्ली का, राजधानी के लड़कों में मिलने वाली स्वाभाविक आत्मविश्वास लिए हुए। दूसरा था संजीत, चेन्नई से आया, उसकी अंग्रेज़ी का उच्चारण उसे उत्तर प्रदेश के हिंदी-

हृदयस्थल का बाहरी व्यक्ति बताता था। कॉलेज के दूसरे दिन तक मुझे एक महत्वपूर्ण बात समझ आ गई, यह रांची नहीं था। यहाँ न कोई पुराना क्रम था, न प्रसिद्धि की कोई तय सीढ़ी, न प्रतिभा और सामान्यता के बीच स्पष्ट विभाजन। यह कॉलेज प्रवेश परीक्षाओं के अंकों के आधार पर छात्र चुनता था, और प्रवेश परीक्षाएँ मेधावी थीं, लेकिन उनमे रांची DAV श्यामली जैसी सूक्ष्म श्रेणियाँ और परख नहीं थी। जिसका अर्थ यह था कि मैं, जो रांची में एक साधारण-सा छात्र था, गिरावट से उबरा था पर कभी शिखर पर नहीं लौटा, अब अचानक अपने बैच के बेहतर-तैयार छात्रों में शुमार होने लगा। यह एहसास पहले सप्ताह में आया, प्रोग्रामिंग के मूल सिद्धांत की कक्षा में। प्रोफेसर, डॉ. योगेन्द्र शर्मा, पतले, गंभीर, गहन दृष्टि वाले व्यक्ति, उन्होंने कक्षा से कहा कि एक साधारण-सा प्रोग्राम लिखें जो किसी संख्या का फैक्टोरियल निकाले। यह एक आसान प्रश्न था, बस बुनियादी तर्क और सिंटैक्स समझना पर्याप्त था। मैंने इसे बिना कठिनाई के लिख दिया शायद दो दर्जन छात्रों ने भी लिख दिया होगा। पर फिर डॉ. शर्मा ने एक अगला प्रश्न पूछा,

*"हम इस समस्या में पुनरावृत्ति (iteration) के स्थान पर आवर्तन (recursion) क्यों चुनें? दोनों विधियों के क्या लाभ–हानि (Trade-offs) हैं?" कमरा अचानक शांत हो गया। अधिकतर छात्र उलझन में थे। कुछ ने अनुमान लगाने की कोशिश की, जवाब पास-पास थे, पर सही नहीं। मैंने, पिछले दो वर्षों में समस्याओं को गहराई से सोचने की जो समझ विकसित की थी, उसका सहारा लेते हुए स्पष्ट अंतर समझाया, रिकर्शन (आवर्तन) गणितीय परिभाषा के अनुरूप और सुंदर है, लेकिन इटरशन (पुनरावृत्ति) स्मृति और गति के दृष्टिकोण से ज़्यादा कुशल है। दोनों में से चुनाव इस बात पर निर्भर करता है कि आप स्पष्टता चाहते हैं या प्रदर्शन (performance)। डॉ. शर्मा ने तुरंत कहा, "बिल्कुल सही।" उनकी आवाज़ में एक दबी हुई संतुष्टि थी। "तुममें से

बहुत कम लोग यह अंतर समझते हैं। अधिकतर लोग सिर्फ़ वह कोड लिखना सीखते हैं जो चल जाए। असल प्रोग्रामिंग

लाभ–हानि संतुलन (Trade-offs) को समझने में है।" उनकी यह टिप्पणी मेरे भीतर एक बीज की तरह रोपित हो गई।

यहाँ, इस कॉलेज में, मुझे कुछ ऐसा मिला जिसकी मुझे उम्मीद नहीं थी, एक सच्ची बौद्धिक चुनौती। लेकिन वह वैसी नहीं थी जैसी रांची में मिली थी। यहाँ प्रतिस्पर्धा याद करने की क्षमता में नहीं थी, न ही सबसे तेज़ समाधान देने में। यह प्रतिस्पर्धा थी, कौन जटिल समस्याओं के बारे में सबसे स्पष्ट सोच सकता है।

पहला सेमेस्टर तेज़ी से बीत गया, प्रोग्रामिंग लैंग्वेजेज़, डिस्क्रीट मैथमेटिक्स और कंप्यूटिंग के मूल सिद्धांतों के बीच। इन वर्षों में मैंने जो सावधान, धीमी और गहन सोच विकसित की थी, वह मुझे हर विषय में सहारा दे रही थी। कई सहपाठी बस लेक्चर का अनुसरण करते, और भाषा के सिंटैक्स को याद करने में संतुष्ट थे। लेकिन मैं और गहरे प्रश्न पूछ रहा था, कुछ डेटा स्ट्रक्चर्स विशिष्ट समस्याओं के लिए ज्यादा उपयुक्त क्यों होते हैं? कंप्यूटेशनल दक्षता किन मूल सिद्धांतों पर आधारित है? मेरी पढ़ाई सिर्फ़ ज्ञान अर्जन नहीं थी, यह दुनिया को समझने और सोच को उन्नत करने की प्रक्रिया बन रही थी। मेरे अंकों में मेरी इस नई समझ का प्रतिबिंब दिखा, पहले सेमेस्टर में 89%। मजबूत अंक। कक्षा में सर्वश्रेष्ठ नहीं,

वह सम्मान अर्जुन को मिला, जो मानो प्रोग्रामिंग अवधारणाओं को अलौकिक सहजता से पकड़ लेता था, पर मेरे अंक मजबूत, सम्मानजनक और सबसे बढ़कर सच्ची समझ पर आधारित थे। लेकिन इसी समय कुछ और भी हो रहा था, ऐसी चीज़ जिसे मैंने पूरी तरह कई वर्षों बाद समझा। कॉलेज के बाहर की दुनिया बदली जा रही थी। 2000 के शुरुआती वर्षों में भारत तकनीकी उछाल

में प्रवेश कर रहा था। सॉफ़्टवेयर कंपनियाँ तेज़ी से बढ़ रही थीं। IT नौकरियाँ, जो पाँच साल पहले अजीब-सी, दुर्लभ-सी मानी जाती थीं, अब तेजी से आम हो रही थीं। और मेरे जैसे कॉलेज, निजी, IIT या NIT जैसी प्रतिष्ठा के बिना, अचानक इस उछाल के फ़ीडर संस्थान बन रहे थे।

दूसरे सेमेस्टर तक प्लेसमेंट्स पर चर्चा शुरू हो चुकी थी। सीनियर्स को कंपनियों से ऑफर मिलने लगे थे। Infosys, TCS, Wipro, HCL, ये नाम जो कुछ महीने पहले दूर के सपने जैसे थे, अब बिल्कुल वास्तविक हो चुके थे। कैंपस में एक अजीब-सा वातावरण बन गया था। अचानक अंकों का महत्व एक नई तरह से बढ़ गया था अब अं सिर्फ़ समझ या बौद्धिक जिज्ञासा का प्रमाण नहीं थे, वे मुद्रा थे। वे तय करते थे, कौन-सी कंपनियाँ आपका इंटरव्यू लेंगी, जो तय करता था, आपकी भावी आय, जो आगे तय करता था, सहपाठियों के बीच आपकी सामाजिक प्रतिष्ठा। मैं खुद को इस नए तर्क में उलझता हुआ पाया। यह नहीं था कि मैंने रांची के पाठ को भूल गया था, मैं अब भी गहरी समझ को अंकों से अधिक मूल्य देता था। लेकिन यह समानांतर मूल्यांकन-प्रणाली, प्लेसमेंट की सीढ़ियाँ, वेतन की अपेक्षाएँ, कंपनियों की प्रतिष्ठा, इन सबने मेरे भीतर एक प्रकार का मानसिक द्वंद्व (cognitive dissonance) उत्पन्न कर दिया।

बढ़ती प्रतिस्पर्धा की आहट

पहले वर्ष के अंत तक कंप्यूटर साइंस बैच में एक स्पष्ट पदानुक्रम उभर आया था। सबसे ऊपर थे वे छात्र जो लगातार 90%+ अंक लाते थे, अर्जुन, प्रिया (मुंबई की एक अत्यंत प्रतिभाशाली छात्रा) और कुछ अन्य। इसके बाद थे अच्छे छात्र, जिनमें मैं भी शामिल था, जो लगातार 85–89% के बीच स्कोर करते थे। और अंत में वे छात्र थे जो संघर्ष कर रहे थे।

अर्जुन के साथ मेरा संबंध मित्रतापूर्ण था, पर उसमें वह अंतर्निहित प्रतिस्पर्धा भी थी जो मुझे रांची में रवि के साथ थी। अर्जुन अवधारणाएँ तेज़ी से पकड़ लेता था,

समस्याएँ जल्दी हल करता था और प्रोग्रामिंग की एक सहज, लगभग नैसर्गिक, समझ रखता था, जिसे पाने के लिए मुझे अधिक मेहनत करनी पड़ती थी।

एक शाम, दूसरे सेमेस्टर में, हम लैब में असाइनमेंट पर काम कर रहे थे जब अर्जुन मेरे पास आया। मेरी विधिपूर्ण, धीरे-धीरे आगे बढ़ने वाली प्रक्रिया को देखते हुए उसने कहा, "तुम ज़रूरत से ज़्यादा सोचते हो।" वह यह बात बुरा कहने के इरादे से नहीं कह रहा था। "मेरा मतलब है, " वह बोला, "तुम्हारा काम साफ़ होता है, सोच-समझकर लिखा हुआ, पर स्पीड भी मायने रखती है। असल दुनिया में कोड तेज़ लिखना भी ज़रूरी है।" मैंने उसकी स्क्रीन की ओर देखते हुए पूछा, "क्या सच में?" अर्जुन मुझसे आधे समय में समाधान लिख देता था, और वह काम भी करता था। पर वह उतना सुव्यवस्थित नहीं था, कई जगह रचनात्मक कमियाँ थीं, कुछ अक्षम हिस्से भी। अर्जुन मुस्कुराया, "मेरा कोड 80% सही है और 100% समय पर। तुम्हारा कोड 100% सही है पर धीमा। कौन सा बेहतर है, यह प्रसंग तय करता है।"

ग्रीष्म का विराम

पहले वर्ष के बाद मैं गर्मियों की छुट्टियों में हज़ारीबाग लौटा। शहर पहले से छोटा लगने लगा था, या शायद मैं ही थोड़ा बड़ा हो गया था। माँ ने मुझे देखते ही कहा कि मैं पहले से अधिक परिपक्व लग रहा हूँ, मेरे चलने, बोलने, और खुद को संभालने के ढंग में एक नई गंभीरता आ गई है। एक दोपहर मैं मिस्टर सुलु के पास गया, जैसा कि हर गर्मी में हमारी परंपरा बन गई थी। अब वे उम्रदराज़ दिखने लगे थे, कदमों में थोड़ी धीमी चाल, साँस में थोड़ी थकान,

लेकिन मन अब भी उतना ही तेज़ और सजग। मैंने उन्हें पहला साल कैसा बीता, कक्षा में तिस्पर्धा, प्लेसमेंट की उभरती हुई सीढ़ियाँ, और समझ के लिए पढ़ने और अंकों के लिए पढ़ने के बीच पैदा हुए तनाव सब कुछ बताया। मिस्टर सुलु चुपचाप सुनते रहे। फिर बोले, "यह तनाव नया नहीं है। औपचारिक शिक्षा की शुरुआत से ही है। सवाल यह है कि तुम इसे कैसे सँभालते हो।" मैंने पूछा, "कैसे?" वे बोले, "याद रखो कि तुमने कंप्यूटर साइंस क्यों चुना था। तुमने इसे इसलिए चुना क्योंकि तुम्हें सिस्टम समझने में रुचि थी, चीज़ें बनाने में आनंद था, समस्याएँ हल करने में संतोष मिलता था। अगर यह सब प्रतिस्पर्धा, रैंकिंग और वेतन की गणनाओं से ढक गया, तो तुम खेल तो जीत जाओगे, पर उद्देश्य हार जाओगे।"

वे रुके, उनकी पैनी, बुद्धिमान आँखें मेरी ओर टिकी रहीं। "दुनिया तुम्हें बार-बार खींचेगी, प्लेसमेंट का पीछा करने को, रैंक की दौड़ में उतरने को, दूसरों से तुलना करने को। पर तुम्हारा मन सच जानता है, कि असली उत्कृष्टता समझ से आती है, तुलना से नहीं। सवाल यह है, क्या तुम अपनी जिज्ञासा को अनजाने जीनियरिंग प्रश्नों तक ले जाओगे, या उसे केवल परीक्षा और इंटरव्यू के सीमित सवालों में बाँध दोगे?" वे आगे बोले, "तुम्हें इन दोनों राहों के बीच संतुलन बनाना होगा। यह आसान नहीं होगा। कई बार दबाव आएगा। क्योंकि मन हमेशा सर्वोत्तम हल नहीं देता। और यही मन की सुंदरता है, कभी वह नई रचनाओं,

आविष्कारों, और खोजों के विचार देता है; और कभी तुम्हें अपने ही मूल्य पर संदेह करा देता है।" फिर उन्होंने वह बात कही जो मेरे भीतर सालों तक गूंजती रही, "लोग मन को मापना पसंद करते हैं, भुवन। IQ स्कोर, रैंक, प्रतिशत, काग़ज़ पर ये सब बहुत साफ़ दिखते हैं, जैसे एक संख्या मनुष्य की गहराई को पकड़ लेगी। पर संख्या केवल गति को मापती है, बुद्धि को नहीं; सटीकता को मापती है, कल्पना को नहीं; प्रतिक्रिया को मापती है, सहनशीलता को नहीं।

मन कोई मीटर-रीडिंग नहीं है, यह एक ब्रह्मांड है जो हर व्यक्ति में अलग-अलग खिलता है। कोई भी स्कोर भाग्य नहीं लिख सकता, क्योंकि मन मापा नहीं जा सकता;

वह केवल समझा जा सकता है।" जब मैं लखनऊ वापस लौटा, उनकी बातें मेरे साथ थीं, जैसे भीतर कहीं शांत आग जल रही हो। पर साथ ही एक और एहसास भी था, कि कॉलेज के अगले वर्षों में और प्लेसमेंट की दुनिया नज़दीक आने पर

यह संतुलन आसान नहीं होगा, बल्कि और कठिन होता जाएगा।

दूसरा वर्ष: दिशाओं का अलगाव

दूसरे वर्ष तक क्लास भीतर ही भीतर स्पष्ट रूप से विभाजित होने लगी थी।

कुछ छात्र, अर्जुन सहित, अतिरिक्त कोचिंग क्लासेस लेने लगे थे, सिलेबस से बाहर के प्रश्न-संग्रह हल कर रहे थे, और अपनी पढ़ाई को इस तरह ढाल रहे थे

कि वे प्लेसमेंट इंटरव्यू के लिए विशेष रूप से अनुकूल बन जाएँ। उनका लक्ष्य

समझ नहीं, चयन था। दूसरी ओर, मेरे जैसे छात्र थे, जो अब भी गहरी समझ का पीछा कर रहे थे, पर धीरे-धीरे यह महसूस हो रहा था कि केवल समझ शायद पर्याप्त नहीं है। क्योंकि जो कंपनियाँ प्लेसमेंट के लिए आती थीं, वे कंप्यूटर साइंस की गहरी सैद्धांतिक समझ नहीं पूछती थीं। वे ऐसे छात्र चाहते थे जो पहेलियाँ जल्दी हल कर सकें, तुरंत कोड लिख सकें, और पहले से मौजूद समस्याओं के

मानक समाधान बता सकें। और यह सब मुख्यतः याद करने का खेल था, जो जितना अधिक मानक एल्गोरिदम याद रखता, समयबद्ध तकनीकी इंटरव्यू में

वह उतना ही अच्छा करता।

दूसरे वर्ष में मेरे अंक अब भी अच्छे थे, औसत 87%, पर वे बढ़ने के बजाय

स्थिर होने लगे थे। उधर अर्जुन के अंक लगातार बढ़ते रहे, वर्ष के अंत तक औसत 91%, क्योंकि उसने कॉलेज की परीक्षा-पद्धति के अनुसार अपने अध्ययन को रणनीतिक रूप से अनुकूलित कर लिया था।

धीरे-धीरे एक प्रश्न मुझे परेशान करने लगा, क्या मैंने गलती की? क्या मुझे भी रणनीतिक होना चाहिए था? क्या मुझे समझ के बजाय प्लेसमेंट और प्रतिस्पर्धा पर ध्यान देना चाहिए था? मेरे भीतर का एक हिस्सा धीरे से फुसफुसाता, "शायद तुम्हें अपना तरीका बदलना चाहिए। ज्यादा प्रतिस्पर्धी बनो। रैंकिंग और तुलना पर ध्यान दो।" पर दूसरा हिस्सा उतनी ही दृढ़ता से कहता, "सच्चा सीखना जल्दी नहीं होता। समझने में समय लगता है। केवल मीट्रिक्स पर प्रतिस्पर्धा करना मूल लक्ष्य से भटका सकता है।" फिलहाल मैं दोनों को संभालने की कोशिश कर रहा था, समझ भी, प्रतिस्पर्धा भी, पर संतुलन हर दिन थोड़ा और अस्थिर होता जा रहा था।

तीसरा वर्ष: प्लेसमेंट का दौर

तीसरा वर्ष एक स्पष्ट, महसूस होने वाली बदलती हवा के साथ आया।

अचानक भविष्य कोई दूर की अमूर्त चीज़ नहीं रहा, वह आने ही वाला था।

प्लेसमेंट चौथे वर्ष में शुरू होने थे, लेकिन तैयारी अभी से शुरू करनी थी।

कॉलेज में कंपनियों के सेमिनार होने लगे, अपनी ग्रेजुएट भर्ती योजनाओं के लिए।

बड़ी कंपनियाँ आईं, Infosys, TCS, Wipro और उनके साथ छोटी कंपनियाँ,

स्टार्टअप, विशेषीकृत तकनीकी फर्में। हर कंपनी के अपने मानदंड थे, अपेक्षाएँ थीं और अलग-अलग वेतन सीमा।

प्रतिस्पर्धा पहले जैसी शांत नहीं रही, अब वह साफ़ दिखाई देने लगी। पहले वर्ष में जो लड़के मित्रवत और सहयोगी थे, अब अपने बेहतरीन समाधान अपने तक ही रखने लगे थे। स्टडी ग्रुप प्रतिस्पर्धी रेखाओं पर बन गए, शीर्ष छात्र अपने आप में, मध्य स्तर के छात्र अपने समूह में, और निचले स्तर के छात्र धीरे-धीरे हाशिये पर।

तीसरे वर्ष तक मैं मध्य-वर्ग के छात्रों में आ गया था, और यह स्थान विचित्र था।

मुझे अपनी क्षमताओं पर पर्याप्त विश्वास था। मैं बड़ी कंपनियों के इंटरव्यू अर्जित कर सकता था लेकिन मैं उस शीर्ष वर्ग में नहीं था जिसे कंपनियाँ खुद ढूँढती थीं, इंटर्नशिप देती थीं, या प्री-प्लेसमेंट ऑफर। मेरी रैंक, लगभग 60 में से 15वीं और अर्जुन की रैंक, लगातार पहले पाँच में, इन दोनों के बीच का अंतर मुझे परेशान करने लगा। गलती इसलिए नहीं कि मैंने गलत चुनाव किया था, मैं अब भी गहरी समझ के मूल्य पर विश्वास करता था। पर इसलिए क्योंकि समाज साफ़ कह रहा था, तुम्हारा भविष्य तुम्हारी समझ नहीं, तुम्हारी रैंक तय करेगी।

नवंबर 2003 में, तीसरे वर्ष के दौरान, मैंने कॉलेज द्वारा आयोजित एक मॉक प्लेसमेंट टेस्ट दिया। 20 प्रश्न। 90 मिनट। कठिन प्रतिस्पर्धा। मैंने 72% स्कोर किया, सम्मानजनक, पर उत्कृष्ट नहीं। अर्जुन ने 89% स्कोर किया। उस शाम

कमरे में निखिल, मेरा रूममेट, ने पूछा, “कैसा हुआ टेस्ट?” “ठीक, ” मैंने कहा,

विस्तार से बताने की इच्छा नहीं थी। “सिर्फ़ ठीक?” निखिल ने ज़ोर दिया। “कितना आया?” “72%, ” मैंने स्वीकार किया। निखिल ने धीमी सी सीटी बजाई,

“प्लेसमेंट के लिए अच्छा नहीं, दोस्त। कंपनियाँ 80%+ वालों में ज़्यादा दिलचस्पी लेती हैं।” “पता है, ” मैंने कहा, यह जानते हुए भी कि यह समझ अब एक बोझ बन चुकी थी। जो मैं नहीं कह पाया और जो मैं धीरे-धीरे अपने भीतर पहचानने लगा था, वह यह था, मुझे समझ थी, गहरी और ठोस। पर जो इंटरव्यू चाह रहे थे, तेज़, क्षणिक समस्या-समाधान, वह एक अलग कला थी। वह गति को पुरस्कृत करती थी, न कि गहराई को। और हाँ, मैं वह कौशल सीख सकता था, पर उसकी कीमत मेरी वह गहरी सीख होती जो हमेशा मेरी ताकत रही थी। और यही मुझमें सबसे अधिक द्वंद्व पैदा कर रहा था। मैं एक चुनाव के सामने था, हालाँकि उस समय मैं उसे चुनाव की तरह पूरी तरह पहचान नहीं पाया था। दो राहें थीं, पहली राह: सच्ची विशेषज्ञता की राह, जो लंबी थी, धीमी थी और शायद थोड़ी कम वेतन वाली भी। दूसरी राह: इंटरव्यू-अनुकूलन की राह, जो तेज़ थी, उच्च वेतन दिला सकती थी, पर शायद गहराई को गति के लिए कुर्बान करना पड़ता।

वर्तमान में भुवन ने कहा, “मेरा सिस्टम 1 सोच तेज़ी से दूसरी राह की ओर

धकेलने लगा था। लगभग सभी उसी दिशा में जा रहे थे। आर्थिक संकेत स्पष्ट थे।

सामाजिक संदेश अस्पष्ट नहीं थे, समाज की परिभाषा के अनुसार भविष्य की सफलता उसी राह पर निर्भर लग रही थी। मेरा सिस्टम 2 सोच अब भी विरोध कर रहा था, पर उसकी आवाज़ धीरे-धीरे धीमी पड़ रही थी।”

अध्याय — आत्मबोध का क्षण

प्रकृति में यह अद्भुत क्षमता होती है कि वह जीवन के किसी भी द्वंद्व से आपको बाहर निकालने का मार्ग स्वयं बना लेती है। जब मन किसी उलझन में होता है, तब यह पूरा ब्रह्मांड मानो सक्रिय हो उठता है, मानसिक प्रक्रियाओं, आंतरिक चेतना के संतुलन और बाहरी संकेतों के माध्यम से, और आपको ऐसे पथ की ओर धीरे-धीरे अग्रसर करता है जो अंततः आपके विकास और आत्म-विस्तार की दिशा में ले जाता है।आवश्यकता होती है उन संकेतों को समझने की और उनके अनुरूप निर्णय लेने की। हमारी सीमित दृष्टि कई बार उन्हीं संकेतों को दुविधा या नई चुनौती के रूप में देख लेती है। परंतु समय बीतने पर, जब हम पीछे मुड़कर देखते हैं, तो उन्हीं क्षणों में द्वंद्व से बाहर निकलने का मार्ग स्पष्ट दिखाई देता है। मेरे जीवन में भी ऐसा ही एक संकेत था… एक रात, जब मैं कॉलेज की कंप्यूटर लैब में अकेला बैठा था, एक ऐसे असाइनमेंट पर काम करते हुए जिसने मुझे भीतर तक खींच लिया था। असाइनमेंट एक सरल ऑपरेटिंग सिस्टम शेड्यूलर इम्प्लीमेंट करने का था, और यह विषय मुझे पूरी तरह मोहित कर चुका था। कैसे अलग-अलग एल्गोरिदम कार्य प्राथमिकता तय करते हैं, निष्पक्षता और दक्षता के बीच कैसे संतुलन बनाया जाता है, और कैसे कंप्यूटर वैज्ञानिकों ने इन समस्याओं के इतने सुंदर समाधान गढ़े हैं, इन सबमें मुझे एक गहरी, सहज सुंदरता दिख रही थी। मैं तीन घंटे तक पूरी तन्मयता से काम करता रहा, समय का ध्यान तक नहीं रहा। यह वही अवस्था थी जिससे मुझे प्रेम था, जब समस्या इतनी रोचक होती है कि बाहरी दुनिया धुंधली पड़ जाती है और बस वही समस्या रह जाती है और उसे सुलझाने की शांत, गहरी संतुष्टि। तभी फ़ोन की एक हल्की सी बीप ने मुझे इस अवस्था से बाहर खींच लिया। वर्तमान में भुवन ने मुस्कुराकर आरव से कहा, “मैंने तुम्हें अपने Samsung Blue Phone के बारे में तो बताया ही नहीं। वह छोटा-सा नीला फोन, होस्टल में जिसे हर कोई सराहता था, मज़बूत की-पैड, और एक स्क्रीन

जो अँधेरे में जैसे एक छोटे एक्वेरियम की तरह चमकती थी। मैंने वह फोन दूसरे वर्ष की Coding Championship जीतकर पाया था। मेरे लिए वह सिर्फ़ एक डिवाइस नहीं था, वह एक पहचान थी, मेरे उस रूप का प्रतीक जिसे बनने की मैं कभी कल्पना करता था। वह फोन मुझे यह ताकत देता था कि मैं प्लेसमेंट के दबाव, अंकों की दौड़ और रटकर पढ़ने की बाध्यता से दूर रहकर सिर्फ़ समस्याओं का पीछा कर सकूँ, उनके समाधान की खोज में। उसमें मेरे पहले कोड स्निपेट्स सेव थे, टीममेट्स के साथ रात देर तक किए गए संक्षिप्त चैट और वे अलार्म जिन्हें मैं कभी नहीं मानता था। यह फोन बहुत कम बजता था, पर जब भी बजता, ऐसा लगता था मानो दुनिया मेरे कंधे पर हल्का-सा हाथ रखकर कह रही हो, "मैं यहाँ हूँ, सुन रही हूँ।" अजीब था, एक साधारण-सा फोन मुझे देखे जाने का एहसास करा देता था। उस रात, जब फोन लैब की मेज़ पर कंपन हुआ, उसके साथ सिर्फ़ एक संदेश नहीं आया, बल्कि एक प्रश्न आया, मैं किस तरह का व्यक्ति बनना चाहता हूँ?"

फ्लैशबैक — आत्मबोध का क्षण (जारी)

वह संदेश अर्जुन का था, "हे, हममें से कुछ लोग कल शाम 6 बजे मॉक इंटरव्यू प्रेप करने वाले हैं। जॉइन करना है?" मॉक इंटरव्यू तैयारी, वही अभ्यास जो प्लेसमेंट इंटरव्यू में तेज़ प्रदर्शन करने के लिए बनाया जाता था। यह सही कदम था, व्यावहारिक, स्मार्ट और रणनीतिक। एक महीने में प्लेसमेंट शुरू होने वाले थे और जो लोग इस तरह की तैयारी करेंगे, उन्हें निश्चित रूप से एक बढ़त मिलेगी।

मैंने अपने असाइनमेंट की ओर देखा, ऑपरेटिंग सिस्टम शेड्यूलर, आधा बना हुआ, पर अत्यंत रोचक। प्लेसमेंट इंटरव्यू से किसी भी प्रकार का सीधा संबंध नहीं। और तभी एक स्पष्टता एकदम से मेरे भीतर उतर आई, उन महीनों में

मैं अनजाने में कौन-सा चुनाव कर रहा था। हर बार जब मैं एक घंटा किसी ऐसी समस्या पर लगाता जो मुझे सच में आकर्षित करती थी, और प्लेसमेंट उपयोगी अभ्यासों को छोड़ देता था, मैं भविष्य की आय, भविष्य की प्रतिष्ठा की एक भावित खिड़की बंद कर रहा था। हर बार मैं समझ को प्रदर्शन से ऊपर रखता था और समाज की नज़र में गलत "मेट्रिक" के लिए अनुकूलन कर रहा था। और फिर भी। मुझे मिस्टर सुलु की आवाज़ याद आई, "याद रखो तुमने कंप्यूटर साइंस क्यों चुना था।" मुझे अपनी माँ की बात याद आई, "महत्वपूर्ण यह है कि तुम बढ़ रहे हो, बेहतर सोच रहे हो, और अधिक बुद्धिमान बन रहे हो।" मुझे वह इंजीनियर की दृष्टि याद आई जो मिस्टर सुलु ने मुझे सिखाई थी, जटिल सिस्टम को देखकर उसके मूल सिद्धांतों को समझना। और अंत में, वह नीला सैमसंग मोबाइल, मुझे यह याद दिला रहा था कि मैं प्रगति और विकास की राह पर हूँ।

हाँ, यह राह लंबी थी, विस्तृत थी, और अधिक प्रयास माँगती थी। लेकिन मैं उस प्रयास के लिए तैयार था। मैंने अर्जुन को संदेश टाइप किया, "कल नहीं आ पाऊँगा। कुछ काम पूरा करना है।" और फिर मैं वापस अपने ऑपरेटिंग सिस्टम शेड्यूलर की ओर लौट गया।

वर्तमान में — जापानी मठ, बोधगया

भुवन ने शांत मठ की मीनार की ओर इशारा किया। "हर टिकाऊ चीज़, बुद्धि, चरित्र, निपुणता, धीमी सोच से जन्म लेती है। तुम्हें किसी और जैसा बनना नहीं है।

तुम्हें बस अपने सर्वोत्तम रूप में, लगातार, जानबूझकर, बिना घबराहट के, जीना है। यही मन लंबी दूरी तय करता है।" आरव ने धीरे से सिर हिलाया, मानो मठ की शांति उसके भीतर भी विचारों को बैठा रही हो। भुवन ने नरम आवाज़

में कहा, "लोग संख्याओं से प्रेम करते हैं, क्योंकि संख्याएँ निश्चित लगती हैं। IQ सच जैसा लगता है, सरल, साफ़, निर्णायक। लेकिन मनुष्य का मन कोई थर्मामीटर नहीं जिसे डुबोकर उसका मूल्य पढ़ लिया जाए।" उन्होंने आगे कहा, "भाग्य अंकों में नहीं लिखा जा सकता। स्कोर तीव्रता तो माप लेता है, साहस नहीं। वह पैटर्न पहचानने की क्षमता मापता है, दृढ़ता नहीं। वह कभी नहीं जान पाता, दयालुता, लचीलेपन, कल्पनाशक्ति, अंतर्ज्ञान या वह सूक्ष्म बुद्धि जो हर व्यक्ति में

अलग तरह से चमकती है। सच यह है, आरव, मन को मापा नहीं जा सकता; उसे केवल समझा जा सकता है।" सूरज मठ के पीछे तांबे की हल्की आभा लिए डूबने लगा था। दोनों जापानी मठ के पार्क से बाहर निकले, और मठ की शांति उनके चारों ओर एक मुलायम शॉल की तरह लिपटी रही। गेट के बाहर एक दुकानवाले ने गरम, फूले हुए नमकीन पकौड़े थमाए। दोनों चुपचाप खाते रहे, क्योंकि कुछ जगह शब्दों से नहीं, मौन से काम होता है। पार्किंग पहुँचकर भुवन ने अपनी कार खोली, पुरानी पर अच्छी तरह सँभाली हुई सेडान, जिसमें पुराने काग़ज़ों और चंदन की हल्की महक थी। आरव फ्रंट सीट पर बैठा, अब भी सुनी हुई कहानी की गहराई समझने की कोशिश में। जब कार बोधगया से निकलकर खेतों के बीच नीली होती शाम में आगे बढ़ी, तो इंजन की घरघराहट और पेड़ों की लयबद्ध आवाज़ बातचीत को एक सहज, कोमल बहाव दे रही थी। भुवन ने उसकी ओर देखा, "आज तुमने बहुत ध्यान से सुना, " उन्होंने कहा। "हर कोई समझने के लिए नहीं सुनता, कई लोग सिर्फ़ जवाब देने के लिए सुनते हैं।" नज़र अब भी सड़क पर, "अच्छा है। क्योंकि किसी और की यात्रा समझना कई बार अपनी यात्रा को भी स्पष्ट कर देता है।" कुछ मिनटों बाद भुवन ने फिर कहा, इस बार उस ठहराव के साथ जो शिक्षक नई सीख शुरू करने से पहले रखते हैं, "आरव, " वे बोले, "अगला रविवार आज जैसा नहीं होगा। अगर इस हफ्ते तुम सच में मेहनत करते हो, ईमानदारी से, डर के

बिना, तो मैं तुम्हें एक खास जगह ले जाऊँगा।" "कहाँ, सर?" आरव ने पूछा। भुवन बोले, "गेहलौर गाँव के पास गहलोर पहाड़ियों की चोटी पर। दशरथ मांझी की तराशी हुई पहाड़ वाली राह। माउंटेन मैन की राह। एक ऐसा आदमी जिसने केवल दृढ़ निश्चय से एक पहाड़ तोड़ दिया था। हम दोपहर बाद निकलेंगे, ढाई-तीन बजे। जब उजाला उस राह पर सही कोण से पड़े।" आरव की आँखें फैल गईं, "मैं हमेशा से वह जगह देखना चाहता था।"

"देखनी चाहिए, " भुवन बोले। "यह याद दिलाती है, कि अड़चनें शिकायत से नहीं हटतीं। वे दृढ़ता से हटती हैं।" कार गया शहर में दाखिल हुई और रोज़मर्रा की हलचल धीरे-धीरे लौट आई। शांति लॉज के पास पहुँचकर भुवन ने कार धीमी की। "चलो, " उन्होंने धीरे से कहा, "पहले तुम्हें छोड़ दें।" आरव ने दरवाज़ा खोला, पर बाहर निकलने से पहले बोला, "सर… धन्यवाद। आज के लिए। सबके लिए।"

भुवन ने एक स्नेहपूर्ण, गहरी उद्देश्य वाली मुस्कान दी, "अगला रविवार। और एक साफ़ मन। और अच्छी प्रगति।" आरव ने उत्साह से सिर हिलाया, फिर लॉज के फाटक की ओर कदम बढ़ा दिए। भुवन उसे अंदर जाते देखते रहे, जब तक वह ओझल न हुआ। फिर कार मोड़कर अपने घर की ओर बढ़े, और रात उनके चारों ओर एक नए अध्याय की तरह धीरे-धीरे उतर आई।

समापन उपसंहार

लखनऊ ने उसे सिर्फ़ यह नहीं सिखाया कि मशीनें कैसे सोचती हैं, बल्कि यह भी कि मनुष्य कैसे दोबारा सोचना भूल जाते हैं। सर्किटों और कोड के बीच भुवन ने पाया कि सबसे कठिन प्रोग्रामिंग मन की होती है, प्रतिस्पर्धा से सृजन की ओर,

सफलता से महत्व की ओर खुद को पुनर्लिखित करना। चिंतन-चिह्न सफलता दो प्रकार की होती है, एक वह जिसे दुनिया पहचानती है, और एक वह जो तुम्हें भीतर से मजबूत बनाती है। अक्सर जिस सफलता को तुम चुनते हो वह वही नहीं होती जिसे लोग पहचानें, पर वही तुम्हारी असली शक्ति बनती है।

निर्णायक वर्ष का प्रारंभ

वर्तमान में — गया से गेहलौर पहाड़ियों की ओर यात्रा

रविवार की दोपहर, गया के ऊपर ढीली, आलसी धूप टंगी थी जब भुवन आरव के लॉज के सामने गाड़ी लेकर पहुँचे। आरव गेट पर इंतज़ार कर रहा था, बाँह के नीचे एक नोटबुक दबाए। औपचारिकता के लिए नहीं, बल्कि एक सप्ताह की नई नीयत के प्रतीक के रूप में। भुवन ने शीशा नीचे किया, हल्की मुस्कान दी और इशारा किया, "आओ। आज पहाड़ पर ज़्रढ़ेंगे।" आरव सामने की सीट पर बैठ गया। इंजन धीरे से गुनगुनाया, जैसे किसी परिचित अध्याय का अगला पन्ना खुल रहा हो। हाईवे पर चढ़ते ही दुनिया बदलने लगी, ट्रैफिक कम हुआ, खेत चौड़े हुए, और दूर-दूर तक पत्थरों की लंबी परछाइयाँ धरती से उठने लगीं। सड़क दोपहर की धूप से गर्म थी। आधा-कटे खेत, पीले और हरे रंगों में घूमते हुए लगातार पीछे छूट रहे थे। ट्रक बेचैन दानवों की तरह हॉर्न बजाते हुए निकल रहे थे। कुछ देर की चुप्पी के बाद भुवन ने नरम स्वर में कहा, "तुम्हारा इस हफ्ते का काम देखा। मेहनत की है तुमने।" आरव ने धीरे से कहा, "कोशिश की, सर।" भुवन बोले, "यही किया जा सकता है। प्रगति पन्नों या घंटों से नहीं, ईमानदारी से मापी जाती है।" वे फल्गु पुल पार कर रहे थे, नदी मानसून की याद की तरह धुंधली चमक लिए बह रही थी। मंज़िल के करीब पहुँचते ही हवा बदल गई, पेड़ भी कुछ अधिक शांत लगने लगे। भुवन बोले, "आज हम उस जगह जा रहे हैं जो असंभव लगने वाली दृढ़ता से बनी है। गेहलौर पहाड़,

दशरथ मांझी की तराशी गई राह। जहाँ दुनिया सीखती है कि जो अचल दिखता है… वह सच में अचल नहीं होता।” आरव बाहर देखते हुए मंत्रमुग्ध था। “सर, ” वह बोला, “मैं आपकी कहानी का अगला हिस्सा सुनने का इंतज़ार कर रहा हूँ।” “मैं सुनाऊँगा” भुवन ने आश्वासन दिया। “पर पहले पहाड़ तुम्हें याद दिलाएँ, कि कोशिश नतीजों से बहुत पहले अपनी राह गढ़ने लगती है।” गाड़ी घुमावदार रास्तों की ओर मुड़ी, सूरज पश्चिम की ओर झुककर चट्टानों को एंबर रंग में रंग रहा था। भुवन ने खिड़की नीचे की। हवा में धूल, शांति, और नीम की हल्की गंध थी। “अब, ” उन्होंने धीरे से कहा जैसे पहाड़ी सामने उठ रही थी, “तुम्हें उस साल में ले चलता हूँ जब मेरी ज़िंदगी बदल गई थी।” उन्होंने एक छायादार पहाड़ी की धार के पास गाड़ी रोकी, वहीं से तराशी हुई पहाड़ी राह का चढ़ाव शुरू होता था। दोनों उतरे। क्षितिज अचानक असीम हो गया, नंगा पत्थर, अनंत आकाश और एक ज़िद का चिन्ह, जो किसी एक आदमी के इंकार से तराशा गया था। आरव कुछ क्षण स्थिर खड़ा रहा,

इस दृश्य में डूबा हुआ। भुवन ने नरम स्वर में कहा, “यहीं से शुरू करते हैं।” और वर्तमान धीरे-धीरे पिघलकर अतीत में बदल गया।

फ्लैशबैक — अंतिम वर्ष की शुरुआत

अगस्त से सितंबर आते-आते, जब मेरा अंतिम वर्ष शुरू हुआ, कैंपस का माहौल बदल चुका था। पहले की खिलखिलाहट गायब थी। अकादमिक प्रतिस्पर्धा जो पहले भी थी, अब दस गुना तीखी हो चुकी थी। हर कोई, छात्र, प्रोफेसर, यहाँ तक कि हॉस्टल के कर्मचारी, सब समझते थे कि यह अंतिम दौड़ है। यही आख़िरी मोड़ जहाँ भविष्य तय होगा।

मैं अपनी पढ़ाई में उस तीव्रता से जुट गया जो पिछले कई वर्षों से मैंने महसूस नहीं की थी। बारहवीं की बोर्ड परीक्षा में मैं असफलता से उबरने की कोशिश कर रहा था, अपनी कीमत साबित करने की। लेकिन अब, मैं दो अलग-अलग

“सफलताओं” को जोड़ने की कोशिश कर रहा था, एक बाहरी, एक भीतरी।

मेरे प्रोफेसरों ने यह बदलाव तुरंत देख लिया। सितंबर की एक कक्षा के बाद डॉ. शर्मा मुझे अलग ले गए और बोले, “अच्छा काम कर रहे हो। पर वह मत खो देना

जो तुम्हें अलग बनाता है, समस्याओं पर तुम्हारी गहरी, शांत सोच। यहाँ बहुत से छात्र सिर्फ़ समाधान रट रहे हैं। सोचने वाले बहुत कम हैं।” यह बात सुनने में उत्साहजनक थी, पर साथ ही उस दूरी को भी स्पष्ट कर गई जो मेरी राह और ‘सिस्टम द्वारा पुरस्कृत’ राह के बीच बढ़ती जा रही थी।

अंतिम वर्ष सिर्फ़ मेरी ज्ञान-सीमा नहीं, मेरे चरित्र की परीक्षा भी था। क्या मैं समझ के प्रति अपनी प्रतिबद्धता बनाए रख पाऊँगा? या व्यावहारिक दुनिया मुझसे एक अलग रास्ता अपनाने की माँग करेगी? क्या मिस्टर सुलु की बुद्धि और मेरे माता-पिताजी की व्यावहारिकता एक हो पाएगी, या हमेशा टकराती रहेगी? उत्तर आने वाले महीनों में छुपा था। अक्टूबर तक लखनऊ उस अजीब से मौसम में प्रवेश कर चुका था, जहाँ गर्मी ढलती है और गुलाबी सर्दी धीरे-धीरे आने लगती है। कैंपस प्लेसमेंट की आहट से विद्युतीत था। कंपनियाँ आ रहीं थीं। पहले इंटरव्यू हुए। ऑफ़र मिलने लगे। और मैं, संघर्ष कर रहा था। मेरे अंतिम वर्ष के अंक अच्छे थे, पर उत्कृष्ट नहीं। मैंने गहराई और गति दोनों का संतुलित मार्ग चुना था, पर यह रणनीति अपेक्षित परिणाम नहीं दे रही थी। मैं न अर्जुन जितना तेज़ था,

न प्रिया जितना विशिष्ट। मैं हर क्षेत्र में सक्षम था, पर किसी एक क्षेत्र में असाधारण नहीं। अर्जुन को TCS और Wipro दोनों से कॉल मिली। प्रिया

को Infosys से, जो सिर्फ़ सर्वोत्तम छात्रों के लिए था। और मुझे, मानक इंटरव्यू राउंड्स के लिए आमंत्रण। यह असफलता नहीं थी, पर यह मेरी "मध्य-स्तरीय पहचान" का पुष्टिकरण अवश्य था। मैं नौकरी पाऊँगा। अच्छा पैसा कमाऊँगा, लगभग 3.5 लाख प्रति वर्ष, जो 2004 के छात्र के लिए बढ़िया था। पर मैं एलीट ट्रैक पर नहीं था, न उच्च वेतन, न वह प्रतिष्ठा। और जो प्रश्न मुझे भीतर तक खाता था, क्या यह

मेरी उस पसंद का परिणाम था जहाँ मैंने समझ को चुना अनुकूलन पर? या मैंने अपनी रणनीति ठीक तरह से लागू नहीं की? वर्तमान में, गेहलौर पहाड़ियों की ढलान पर सूरज धीमी, सोने-सी आभा में गेहलौर की पहाड़ियों के पीछे उतरने लगा था और उसकी पिघली हुई रोशनी पहाड़ी की धार को कोमल, द्रव सोने में बदल रही थी। यहाँ की हवा गया की शाम जैसी नरम नहीं थी, यह हवा पुरानी थी,

गहरी थी और अपने साथ खनन मजदूरों, पत्थर तराशने वालों और न झुकने वाली उम्मीदों की कहानियाँ लेकर चल रही थी। भुवन और आरव उस पथरीली उभार पर खड़े थे जहाँ से घाटी एक पुराने पर्चमेंट की तरह धीरे-धीरे खुलती थी। अभी कुछ ही क्षण पहले भुवन ने वह फ्लैशबैक समाप्त किया था, दुविधाओं का अराजक तूफ़ान, डगमगाता आत्मविश्वास, माता-पिताजी और सुल्लू सर से मिली सीख, वह मोबाइल और प्रकृति द्वारा दिए गए मौन संकेत, पर उसकी गूँज अब भी हवा में भारी होकर तैर रही थी। भुवन ने आरव की ओर देखा, थकी हुई लाल आँखें, संभलकर खड़े रहने की काँपती कोशिश और उसे लगा मानो वह खुद को देख रहा हो, आज का भुवन नहीं, बल्कि वह लड़का जो कभी किसी दूसरी पहाड़ी पर किसी और समय-चक्र में ठीक यही प्रश्न लिए खड़ा था। उसने आरव के कंधे पर एक दृढ़ हाथ रखा। "डर का मतलब यह नहीं कि तुम असफल हो गए, " भुवन ने कहा। "इसका मतलब है, कि तुम्हें सच में परवाह है।" नीचे घाटी

बुझती रोशनी में हल्के-हल्के चमक रही थी। दूर कहीं मज़दूरों की आवाज़ें समय पर पड़ते हल्के हथौड़ों की तरह गूँज रही थीं। यहाँ, इस पर्वत-धार पर, दुनिया कठोर भी थी और अजीब तरह से सांत्वना देने वाली भी। आरव ने अपने जूते की ओर देखा। "सर... उस सबके बाद आपने क्या किया? फाइनल ईयर के पूरा होने के बाद?" भुवन हल्के से मुस्कुराए। "वही, " उन्होंने क्षितिज की ओर देखते हुए कहा, "वह कहानी... इस पर्वत-धार के बाद शुरू होती है।" लड़के की आँखें धीमी, शांत उत्सुकता से उठीं। भुवन ने सिर हिलाया, "चलते हैं। लेकिन वह हिस्सा... एक अलग तरह की सच्चाई माँगता है।" वे दोनों पार्किंग क्षेत्र की ओर

जाती पतली पगडंडी पर लौटने लगे, कंकड़ उनके कदमों के नीचे धीरे-धीरे चरमराते हुए। सूरज अब अरवल की ओर पूरी तरह झुक रहा था और उसकी परछाइयाँ गेहलौर की विशाल चट्टानों पर लंबी बहने लगी थीं। पर्वत-धार से उतरने से पहले भुवन रुके, ताकि आरव एक बार और उस दृश्य को पूरी तरह आत्मसात कर सके। और इसी तरह "निर्णायक वर्ष के प्रारंभ" का फ्लैशबैक समाप्त हुआ। किसी कमरे में नहीं, किसी अध्ययन-हॉल में नहीं, बल्कि एक नंगे, साक्षी से पर्वत धार पर, जिसने कभी एक आदमी को असंभव को रास्ते में बदलते देखा था।

संभावनाओं की खोज

वर्तमान में — मध्य ढलान की शांत दहलीज़

जब वे पहाड़ी की मध्य ढलान के चौड़े उभार तक पहुँचे, हवा अब नरम हो चुकी थी। पत्थरों पर लंबी, पतली परछाइयाँ खिंच गई थीं और शुरुआती शाम की शांति

पुराने मित्र की तरह उनके चारों ओर आ बैठी थी। आरव एक समतल चट्टान पर बैठ गया, घुटनों को हल्के से समेटे, नीचे साँप-सी मुड़ती सड़क को गहरे ध्यान से देखते हुए। भुवन कुछ पल खड़े रहे, ताकि यह भारी, अर्थपूर्ण मौन दोनों के भीतर

अपने लिए जगह बना सके। आख़िरकार उन्होंने कहा, दूर तक फैले धूसर और मिटती एंबर रोशनी वाले दृश्य की ओर इशारा करते हुए, "यह हमें एक सरल परंतु गहरी बात सिखाता है, कि जीवन कभी सीधी रेखाओं में नहीं चलता, भले ही हमारी योजनाएँ उसे ऐसा बनाने की कितनी ही कोशिश करें।" आरव ने सिर उठाया, प्रतीक्षा में, ध्यान में। भुवन बोले, "परिणामों के बाद मुझे लगा सब खत्म हो गया है। पर असल में एक व्यक्ति की खोज वहीं से शुरू होती है, जब जीवन

हमारी इच्छा के अनुसार नहीं चलता।" वे कुछ कदम आगे बढ़े, उनके जूते सदियों से पड़ी धूल से धीरे-धीरे सरसराते हुए। "अन्वेषण अथवा संभावनाओं की खोज यात्रा नहीं है, " भुवन ने कहा। "अन्वेषण समझ है। और कई बार अगला कदम समझने के लिए हमें अपने भीतर की उन पहाड़ियों पर लौटना पड़ता है, जहाँ संदेह हमें धकेलता है और जहाँ स्पष्टता चुपचाप हमारा इंतज़ार करती है।"

आरव ने कठिनाई से निगलते हुए पूछा, "और… आपका अगला कदम कैसे शुरू हुआ?" भुवन मुस्कुराए, थकी, जानकारी से भरी, कोमल मुस्कान। "मेरे अगले कदम की शुरुआत तब हुई जब मैंने स्वीकार किया कि पुराने आत्मविश्वास से

आगे नहीं बढ़ा जा सकता। मुझे नया आत्मविश्वास बनाना था, धीरे, सजग होकर,

ईमानदारी से।" लड़के ने धीरे-धीरे सिर हिलाया, मानो कोई भीतर का बिंदु धीमे से जगह पर आ रहा हो। हवा फिर उठी, इस बार कोमल, कुछ सूखे पत्ते उनके पास से उड़ाती हुई। जैसे पहाड़ स्वयं एक नए अध्याय की शुरुआत को स्वीकार कर रहे हों। यह एक दहलीज़ थी, स्मृति और अर्थ के बीच, एक लड़के की हिचकिचाहट और एक नव-जागृत मन की अंतर्यात्रा के बीच।

फ्लैशबैक — नई राह का आरंभ

दिल में गूँजती माता-पिताजी, सुल्लू सर, और वर्षों की सीख को साथ लेकर मैंने अपने लिए एक नई राह चुनी, अब वह राह न सबसे सुरक्षित थी, न सबसे प्रतिष्ठित, पर वह जिज्ञासा, अन्वेषण और अपने भीतर छिपे सामर्थ्य को परखने की राह थी। यात्रा शुरू हुई सी-डैक, बेंगलुरु से, एक ऐसा वातावरण जहाँ नवाचार हवा में तैरता था, जहाँ प्रतिभा और सीखने की भूख वंशावली और प्रतिष्ठा पर भारी पड़ती थी। यहाँ मैं हर अवसर पर टूट पड़ा, नए तकनीकी कौशलों को

रातों-रात सीखना, भारत के विविध कोनों से आए साथियों के साथ टीमें बनाना और सबसे चुनौतीपूर्ण प्रोजेक्ट्स के लिए स्वयं आगे आना। इस तेज़, प्रयोगशील वातावरण ने मेरी उभरती मानसिकता को और तेज़ कर दिया और जल्द ही मैं पहचाना जाने लगा, महत्वाकांक्षा के अंधे दौड़ के लिए नहीं, बल्कि सिद्धांत और व्यवहार के बीच पुल बनाने की क्षमता के लिए, सीखने और सहयोग करने के स्वभाव के लिए। ऑफ़र आने लगे, पर मैंने चुना Siemens को, जहाँ विस्तार भी था और नवाचार की स्वतंत्रता भी। यह छलाँग परिवर्तनकारी साबित हुई। सहकर्मी मुझे मज़ाक में "वंडर बॉय" कहने लगे, पर धीरे-धीरे यह उपनाम गंभीर हो गया जब मेरा ना पुरस्कार सूचियों, नवाचार मंचों और आंतरिक पहचान समारोहों में दिखने लगा। मैंने जटिल उत्पाद लॉन्च का नेतृत्व किया, नए साथियों का मार्गदर्शन किया और कई बार एक सच्चे,

निश्छल विस्मय में पाया कि मैं विभिन्न पृष्ठभूमियों के लोगों के लिए परिवर्तन का माध्यम बन रहा हूँ। और फिर भी, अपनी सर्वोच्च उपलब्धियों पर भी मैं ताली की गूँज के लिए नहीं काम कर रहा था। मैं इसलिए काम कर रहा था क्योंकि हर चुनौती मुझे एक नए व्यक्ति में बदलने का अवसर देती थी।

कई वर्षों बाद, Siemens की शेल्फ़ों पर ट्रॉफ़ियों की कतार थी और निदेशकों के "Congratulations!" वाले लिफ़ाफ़े मानो मेरी यात्रा के दस्तावेज़ थे। दुनिया मुझे "सफल" कहती, पर मेरे लिए जीत कभी अंत नहीं थी। मेरे भीतर एक नया विस्तार पुकार रहा था, करियर में भी, जीवन में भी, और साथ ही माँ-पिताजी के पास लौटने का एक गहरा खिंचाव। जब दीपावली करीब आई, घर और जड़ों की स्मृति और प्रबल हो गई। मैंने अवकाश लिया, थैलों में मिठाइयाँ, उपहार, और अनगिनत यादें भरीं और लौट पड़ा हज़ारीबाग, अपने प्रारंभिक नगर की ओर, बंद होने के लिए नहीं, बल्कि एक नई शुरुआत के लिए।

वर्तमान में — गया लौटते हुए

भुवन और आरव धीरे-धीरे, बिना किसी जल्दबाज़ी के चलते रहे। जब तक वे कार तक पहुँचे, नीचे की घाटी शाम की गहरी होती छाया में डूब चुकी थी। भुवन ने इंजन स्टार्ट किया और गेहलौर से गया की ओर धीमी, घुमावदार यात्रा शुरू हुई। लंबे समय तक आरव खिड़की से बाहर चुपचाप गुजरते दृश्य को देखता रहा। फिर, मानो भीतर कहीं एक नई खुली जगह से साहस उमड़ा हो, उसने धीरे से कहा, "सर… क्या मैं… हर रविवार आपके साथ आ सकता हूँ? सुबह पाँच बजे?

आपके घर के पीछे वाली पहाड़ी पर, वही जगह… जहाँ… जहाँ से मेरी यह यात्रा शुरू हुई थी?" भुवन ने उसकी ओर देखा, लड़के की आवाज़ की ईमानदारी और सीधेपन ने उन्हें क्षण भर को हैरान कर दिया। उन्होंने शांत स्वर

में पूछा, “वही पहाड़ी?” मानो उत्तर पहले से जानते हों। आरव ने सिर हिलाया। “मुझे लगता है…

वहाँ जाने से मैं फिर से साँस ले पाता हूँ। और आपके साथ चढ़ते हुए… मुझे अपना मन ज़्यादा साफ़ समझ आता है। अगर आप अनुमति दें… मैं हर सप्ताह आना चाहता हूँ।” भुवन मुस्कुराए, वह औपचारिक मुस्कान नहीं, बल्कि वह मौन, कृतज्ञ मुस्कान जो किसी अनपेक्षित उद्देश्य के क्षण को पहचान लेती है। “मुझे बेहद खुशी होगी, ” उन्होंने कहा। “बल्कि, यह मेरे लिए सम्मान होगा।” आरव के कंधे हल्के होकर नीचे ढल गए, जैसे किसी अदृश्य बोझ से मुक्त हो गया हो। भुवन ने आगे कहा, उनकी आवाज़ में ढलती शाम की गरमाहट शामिल थी, “जानते हो, आरव… मैं हमेशा मानता हूँ कि जीवन में यदि हमें एक भी युवा मन को दिशा देने का मौका मिले, तो हमें उसके साथ सच्चाई से चलना चाहिए। अगर तुम इस यात्रा के लिए तैयार हो, तो मैं तुम्हारे साथ चलूँगा।” आरव ने इस बार दृढ़ता के साथ सिर हिलाया। गया के बाहरी इलाके आते ही सड़क सीधी होने लगी। मंदिरों के शिखर पहली स्ट्रीटलाइट की पीली रोशनी में हल्के से चमकने लगे। भुवन ने गाड़ी की गति थोड़ी धीमी कर दी, मानो यह परिदृश्य कुछ और क्षणों का अधिकार रखता हो। फिर उन्होंने विचारपूर्ण स्वर में कहा, “लेकिन याद रखना, हर यात्रा में एक ऐसा क्षण आता है जब रास्ता बदलता है, कभी चुपचाप,

कभी अचानक। जब मैं अपनी संघर्षों के बाद हज़ारीबाग लौटा था… तो एक पारिवारिक चर्चा में हमारे लिए एक नई दिशा खुली।” आरव ने मुड़कर पूछा, “कौन-सी दिशा, सर?” भुवन ने तुरंत उत्तर नहीं दिया। उनके चेहरे पर हल्की-सी पुरानी यादों की चमक उतर आई। “वह… अगला हिस्सा है कहानी का। और उसने हमारी ज़िंदगी… पूरी तरह बदल दी।” गया शहर में प्रवेश करते हुए

स्ट्रीटलाइटें एक-एक कर जल उठीं, और शाम धीरे-धीरे शांत रात में बदलती गई। कार के भीतर दो यात्राएँ, एक स्मृतियों में बसी, दूसरी अभी-अभी आरंभ हुई, साथ-साथ एक ही मंज़िल की ओर बढ़ रहीं थीं।

समापन उपसंहार

“निश्चितता का पीछा करते हुए भुवन ने स्पष्टता पाई, कि विकास नॉइज़ को शांत करने में नहीं, बल्कि उसके पार सुनना सीखने में है। यात्रा अब दूसरों को प्रभावित करने की नहीं थी, स्वयं को पूरी तरह समझने की थी।”

भाग IV —
आत्म-निर्माण का अनंत प्रवाह

अध्याय 7 — नीम वृक्ष संवाद: एक नई शुरुआत

हर पूर्वाग्रह पहले एक ढाल होता है, दुनिया की उलझनों को सरल बनाने की मन की सहज कोशिश। पर सच्ची बुद्धि तब जन्म लेती है जब हम उस ढाल के पार झाँकने का साहस करते हैं।

वर्तमान में — नवम्बर: रविवार, सुबह 5:00 बजे

दुनिया अभी आधी नींद में थी जब भुवन ने घर का फाटक खोला। हवा में वही पहचानी सुबह-सुबह की नमी भरी शांति थी, मानो पूरी प्रकृति साँस रोककर

मौन को थामे हो। घर के पीछे की पत्थर की पगडंडी सुबह की पहली हल्की किरणों में माइका की चमक लिए धीमे-धीमे झिलमिला रही थी। सामने पहाड़ी अंधेरी और धीरज भरी खड़ी थी, उसके आकार धुंध से नरम हो गए थे। नीचे शहर बस जागना ही शुरू कर रहा था; कहीं दूर एक मंदिर की घंटी बजी, उसकी आवाज़ सोने की पतली डोरी की तरह ऊपर हवा में तैरती चली आई। भुवन ने अपने पुराने कैनवास के पानी की थैली कंधे पर ठीक की और हल्का-सा मुस्कुराए। तभी जल्दी-जल्दी आती हुई कदमों की आवाज़, फिर एक जानी-पहचानी आवाज़, "सर… गुड मॉर्निंग!" आरव पगडंडी के नीचे पहुँच चुका था,

साँस हल्की-सी चढ़ी हुई, बालों में अभी भी उस जल्दबाज़ी वाली सुबह की नमी

जो किसी लड़के के पास हिम्मत के जागने से पहले होती है। उसकी चप्पलों पर

गलियारे की लाल मिट्टी लगी थी, और आँखों में नींद की परछाइयों के बावजूद

भुवन को देखकर एक चमक उभर आई। भुवन मुस्कुराए, "तुम जल्दी आ गए।"

आरव ने सिर हिलाया। "नींद नहीं आई, सर। मैं बस… आज के बारे में सोचता रहा।" भुवन ने धीमे से कहा, "तो फिर आज का दिन महत्वपूर्ण है। चलो।" दोनों चढ़ाई शुरू कर दी। पहाड़ी ऊँची नहीं थी, पर पहले मन को कसती थी, फिर टाँगों को। कुछ मिनट साझा चुप्पी में बीते, ठीक उसी तरह जिस तरह उनकी यह अनोखी दोस्ती कई हफ्ते पहले शुरू हुई थी। रास्ता दो चट्टानों के बीच थोड़ा सँकरा हुआ। ऊपर से एक पतली जलधारा बह रही थी, जहाँ सुबह की हल्की नारंगी रोशनी वैसे ही चमक रही थी जैसे उस दिन जब भुवन ने पहली बार रोते हुए लड़के को यहाँ पाया था। लेकिन आज, लड़का नहीं रो रहा था। आज, वह उद्देश्य लेकर चढ़ रहा था। छोटी सी खुली जगह पर पहुँचकर, जहाँ से विष्णुपद मंदिर का शिखर दिखता था, आरव थोड़ा धीमा हो गया। आकाश केसरिया रंग लेने लगा था; नीचे शहर मुलायम उजाले में नहाने लगा। घरों से उठता सुबह का धुआँ प्रार्थनाओं जैसी नर्मी से ऊपर उठ रहा था। "यह जगह… अब अलग लगती है, " आरव ने फुसफुसाते हुए कहा। भुवन ने उसकी ओर देखते हुए कहा, "क्योंकि अब तुम अलग हो।" आरव ने तुरंत उत्तर नहीं दिया। वह समतल पत्थर पर बैठ गया, घुटनों को हल्का-सा मोड़कर, क्षितिज को धीरे-धीरे उजाला लेते देखते हुए। हवा गीली पत्तियों की सुगंध लिए शांत होकर बह रही थी। "सर, "

आरव ने धीरे से कहा, "पिछले रविवार… लौटते समय… आपने कहा था कि

घर जाने के बाद आपके परिवार में एक बातचीत हुई थी, और आपके लिए एक नई राह शुरू होने वाली थी।" भुवन की आँखें नरम पड़ गईं। "हाँ, " उन्होंने कहा।

"उसी शाम मेरे जीवन में विकास की एक नई राह का बीज पड़ा था।" आरव आगे झुककर बैठ गया, अब बेचैनी नहीं, बल्कि सच को जानने की परिपक्व

जिज्ञासा लिए। भुवन उसके पास पत्थर पर बैठ गए। ऊपर एक पुराना नीम का पेड़, तेज़ होती हवा में धीरे-धीरे सरसराने लगा था। “तो आज, ” भुवन बोले, “हम वहीं से शुरू करेंगे। क्योंकि तुम और मैं यहाँ जो यात्रा शुरू करते हैं, वह तभी समझ आएगी जब मैं तुम्हें बताऊँ कि उस दिन मेरी ज़िंदगी कैसे बदली।” आरव ने धीरे से सिर हिलाया। नीचे शहर पूरी तरह जग चुका था, मंदिरों के शिखर गरम रोशनी में चमक रहे थे और सुबह के पक्षी आकाश में फैल चुके थे। और वहीं, नीम के पेड़ की छाँव में, गया पर टूटती नई सुबह के साथ, एक नया अध्याय शुरू हुआ। शांत, सच्चा और ठीक वैसे ही जैसे बड़े परिवर्तन हमेशा साधारण सुबहों में चुपचाप जन्म लेते हैं। निर्णयों की अदृश्य वक्रता आख़िरकार हर मार्ग को अर्थपूर्ण दिशा में मोड़ देती है।

फ्लैशबैक — दीयों की आहट वाला वह संध्या

दीपावली निकट थी और हज़ारीबाग की शाम सोने की नर्मी और मौन की कोमलता में धीरे-धीरे ढल रही थी। मैं पुराने आँगन में नीम के पेड़ के नीचे बैठा था, उसकी लंबी, थकी छायाएँ फटी-पुरानी टाइलों पर वैसे ही फैल रही थीं जैसे बचपन की यादें सालों को जोड़ती चली जाती हैं। एक घिसी-पिटी नोटबुक मेरी गोद में खुली थी, एक बिल्कुल नए पन्ने पर। माँ बरामदे में कभी इधर, कभी उधर हो रही थीं, हल्की-सी धुन गुनगुनाते हुए और रसोई से जीरे की खुशबू धीमे-धीमे हवा में घुल रही थी। पिताजी किसी पुराने मित्र से मिलने गए थे। पड़ोस से बच्चों की हँसी, उड़ते पत्तों की तरह हवा में तैर रही थी। मैं पीछे टिककर आँखें बंद कर लेता हूँ, और वह शाश्वत ध्वनियाँ धीरे-धीरे कानों में उतरती हैं, दूर की हॉर्न,

कहीं गाय की मँ… मँ…, और गली के छोर से किसी का पुकारना, “चाय!” यही ध्वनियाँ मेरी यात्रा के कई मौसमों की पहचान रही थीं, किशोरावस्था की महत्वाकांक्षा से लेकर उस दिन तक जब मैंने Siemens में “वंडर बॉय” विशेष

प्रशंसा और उद्योग के पुरस्कार पाए। वह सफलताएँ, जो कभी क्लास 10 के नतीजों से पहले पेंसिल चबाते उस लड़के के लिए अकल्पनीय थीं, अब गर्व जितना ही विनम्रता लेकर आती थीं। माँ बाहर आईं, रसोई में हाथ धोकर बरामदे की रस्सी पर टंगे पुराने तौलिये से पोंछते हुए। वे वैसे ही मुझे देख रही थीं जैसे बचपन से देखती आई थीं, धीरे, ध्यान से, चुपचाप। "आज बहुत सोच में डूबे लग रहे हो, " उन्होंने कहा, मेरे पास बैठते हुए। मैं मुस्कुराया, "सोच रहा हूँ कितना कुछ हो गया… और कितना कम भी। ऐसा लगता है, बहुत दूर आ गया हूँ, पर अभी भी असली बुद्धिमानी सीख रहा हूँ।"

फ्लैशबैक — नीम की छाँव में संवाद (जारी)

माँ ने मुझे स्टील का एक गिलास थमाया। "बुद्धि उम्र से नहीं बँधती, बेटा। यह समझ की तरह बढ़ती है, धीरे, मौन में और तभी जब मन तैयार हो।" इतने में

फाटक चरमराया और दो परिचित आवाज़ें हमारी शाम में घुल गईं, आला और अवी, मेरी छोटी बहनें। आला, अपनी चमकती आँखों के पीछे गंभीर चश्मा, छाती पर दबाए UPSC की मोटी किताबें, आकर मेरे दूसरी ओर बैठ गई। अवी, हमेशा की तरह उत्सुक, एक जुगनू को पकड़ने के लिए आँगन में उछलती-कूदती रही।

पहले आला ने कहा, उसकी आवाज़ हमेशा की तरह संयत और सोच-भरी, "भैया, मैं सिविल सर्विस के बारे में पढ़ रही हूँ... क्या दुनिया है! क्या आपने कभी सोचा कि कॉलेज के बाद आप भी ट्राई करते?" मैं ठहर गया। उसके प्रश्न ने, नीम की छाँव में फैली उस सांझ की हवा में, पुराने संशय फिर से जगाने शुरू कर दिए, वह शोर जिसमें हज़ारों रायें, संदेह और लोगों की अपेक्षाएँ एक-दूसरे से टकराती थीं। मैंने धीरे से कहा, "मैंने उस सपने की कद्र की, आला। पर मेरे लिए

वह सपना हमेशा परिवार की कहानियों, उम्मीदों और ऐसी कठिनाइयों में उलझा रहा जिन्हें न समझा जा सकता था, न नियंत्रित किया जा सकता था।" आला अपना सिर मेरे कंधे पर रख देती है। "कभी-कभी सोचती हूँ, " वह फुसफुसाई,

"क्या हम सच में इन दबावों से कभी बाहर निकल सकते हैं?" माँ थोड़ा-सा झुककर बोलीं, "उम्मीदें कभी सहारा देती हैं, कभी बस... परेशान करती हैं। पर चुनाव हमेशा तुम्हारा होता है। भुवन ने यह सीखा, अब तुम्हें भी सीखना होगा।"

अचानक अँधेरे की ओर से अवी की चिर-परिचित आवाज़ उछली, "तो भैया, सफल कौन होता है? मार्क्स से? किस्मत से या... मैजिक से?" मैं मुस्कुराया, उन लंबी यात्राओं को याद करते हुए जिन्होंने मुझे यह समझ दी थी। "थोड़ा-थोड़ा सबका, अवी।" मैंने उसकी ओर मुड़कर कहा, "तुम जानती हो, जब मैं IIT या NIT की लिस्ट में नहीं आया था, तो लगा था सब खत्म हो गया। पर अब समझता हूँ, हमारी ज़िंदगी उतनी ही दूसरों की अपेक्षाओं से बनती है जितनी उन अनदेखे, अनियंत्रित संयोगों से जो हमें अचानक घेर लेते हैं। सोचो, एग्ज़ाम के दिन कुछ बच्चे बीमार पड़ जाते हैं, कुछ को कठिन पेपर मिलता है, कुछ घबरा जाते हैं। इसलिए खुद को सिर्फ़ रैंक से मत मापो, बल्कि इस बात से कि जब हवा का रुख बदलता है तो तुम कैसे खड़े रहते हो।" आला की भौंहें सिकुड़ गईं "पर भैया... फिर आगे कैसे बढ़ते हैं? अगर दोबारा असफलता मिली तो?" मैंने अपनी नोटबुक खोली, जिसमें लिखे थे स्याही से धुले, कच्चे-पक्के, पर सच्चे अनुभव। "यहीं, " मैंने कहा, "हमारे मन की सीखने की मानसिकता काम आती है। विकास वह नहीं जो तुम्हारे पास पहले से है, बल्कि वह है जिसे सीखने की तुम्हारी इच्छा अनुमति देती है। हर असफलता, मेरे छूटे हुए रैंक, सरकारी कॉलेज के चक्करों में फँसना, कठिन कोडिंग जॉब्स, और अजनबी कंपनी की राजनीति, इन सबने सिखाया कि असफलता को दोष-पत्र

नहीं, जानकारी समझो।" मैंने दोनों बहनों को अपनी बाँहों में खींच लिया। "सफलता, " मैंने कहा, "यही जानने में है कि कब अपनी प्रवृत्ति पर भरोसा करना है, और कब ठहरकर सोचना, समझना और सवाल पूछना है। मेरी पूरी ज़िंदगी इन दोनों के बीच नृत्य है। कभी तुरंत निर्णय ने अवसर दिया, और कभी गहरी सोच ने मुझे गलतियों से बचाया। हर प्रमोशन, हर अवॉर्ड, तेज़ी और चिंतन दोनों का संतुलन था।" माँ मुस्कुराईं, उनकी आँखों में

अनकहे किस्सों की पूरी दुनिया थी। "तुमने सिखाने का तरीका पा लिया है, घर में भी, घर से दूर भी, " उन्होंने कहा। मैंने सिर हिलाया। "Siemens" में मैं यह रोज़ देखता हूँ, निर्णय अधूरियों, पसंद-नापसंद, और गलत अनुमानों से बनते हैं। टीम मीटिंग्स अक्सर निर्णय संबंधी त्रुटियों से पटरी से उतर जाती हैं। इसलिए जब योजना असफल होती है, तब सीखने की प्रवृत्ति सबसे ज़रूरी है। यही असली सीख है, आला, सिर्फ़ सिविल सर्विस के लिए नहीं, किसी भी राह के लिए।" आला ने क्षितिज की ओर देखा, उसकी आँखें चमक रही थीं। "तो भैया… सच्ची बुद्धि

परिणामों से नहीं मिलती?" "नहीं, " मैंने कहा। "यह परिणामों की खामियों, उनके अराजकपन, उनकी अनिश्चितता के बीच जीने में है और इसके बावजूद विकास को अपनी चॉइस बनाने में। हमारी शिक्षा, हमारी उपलब्धियाँ, हमारी गलतियाँ, सब जीवन के एक उलझे हुए प्रयोग का हिस्सा हैं।" अवी ने धीमे से पूछा, "यदि हम कभी खो गए… तो क्या आप हमेशा हमारी मदद करेंगे?" मैंने उसका हाथ थपथपाया। "हमेशा। लेकिन सिर्फ़ मार्गदर्शन नहीं, मैं तुम्हें यह भी सिखाऊँगा कि ठहरना कैसे है, सोचना कैसे है, और हवा जैसे भी चले, साहस से निर्णय कैसे लेना है।" ऊपर नीम की पत्तियाँ हल्की, हवा-भरी सरसराहट में उत्तर देती-सी हिलीं। बरामदे पर दीये जल उठे और उनका सुनहला प्रकाश हमारे चेहरों पर फैल गया। माँ ने धीरे से पूछा, "और अगर तुम्हें फिर कभी असफलता मिली तो?"

मैंने ऊपर देखा, माँ की आँखों में प्यार और वर्षों की अनकही सीख भरी थी। "तो फिर, " मैंने कहा, "मैं असफल होना चाहूँगा, पर जागरूक होकर, डर के साथ नहीं। ताकि हर असफलता के बाद अपने आप से पूछ सकूँ, 'अब मैं क्या देख पा रहा हूँ जो पहले नहीं समझा? और दूसरों को भी, ठीक वैसे ही जैसे आपने मुझे, दिल से मार्गदर्शन दे सकूँ, सिर्फ़ शब्दों से नहीं।" आला ने मेरा हाथ दबाया, सोच में डूबी, गहरी। "शायद एक दिन मैं भी अपनी यात्रा लिखूँगी, भैया। UPSC की यात्रा… क्या कहते हैं?" मैं मुस्कुराया, "वही मेरा वादा है। क्योंकि यात्रा खत्म नहीं होती, न मेरी, न तुम्हारी, न उन सबकी जो अभी चलना शुरू भी नहीं हुए।" रात

धीरे-धीरे उतर आई, नरम, निश्चित, भरोसेमंद। बच्चों की आवाज़ें किसी दूर की धुन में तब्दील हो गई। मैंने अपनी नोटबुक में एक पंक्ति लिखी, उस पहले चौथाई हिस्से में जहाँ से यह डायरी रांची की यात्रा के साथ शुरू हुई थी: "सीखने का अंत

कभी किसी परिणाम से नहीं होता। सीख फिर शुरू होती है, हर बार, जब हम जागरूक होने का साहस करें, असफलता के कारण को समझकर अपने आप को ढालें, और बढ़ें, तेज़, धीमे और हमेशा साथ।"

वर्तमान में — पहाड़ी से उतरते हुए

उस सुबह पहाड़ी का उतरता रास्ता कुछ और मुलायम लगता था, जैसे धरती स्वयं मान रही हो कि कोई महत्वपूर्ण चक्र अब पूरा हो चुका है। भुवन धीरे-धीरे टहलते हुए नीचे आ रहे थे, थकान से नहीं, बल्कि उस सूक्ष्म चेतना से कि वर्षों की वह लंबी यात्रा, फैसलों, संघर्षों, असफलताओं और जागृतियों के बीच से गुजरती, अब एक संपूर्णता पर पहुँची है। कई दिनों तक वे आरव को अपनी स्मृतियों के प्रदेशों से ले गए थे, कक्षाओं के दबाव, रातों की छिपी हुई

टूटन, माँ के पत्र, स्वयं-संदेह और स्वयं-नवीकरण के एल्गोरिद्म और जीवन द्वारा शैक्षणिक संघर्षों के वेश में दिए गए नैतिक पाठ। और अब, नीम के पेड़ वाला संवाद पूरा हो जाने के बाद, भुवन को महसूस हुआ कि उन्होंने सिर्फ़ कहानी नहीं सुनाई, उन्होंने एक जीवन को उकेरा है। वे दोनों उस मोड़ पर पहुँचे जहाँ से गया की छतों की धीमी, धुँधली रेखाएँ दिखती थीं। तभी आरव ने धीमे स्वर में पूछा, “सर…मेरे लिए इस सबका मतलब क्या है?”

अध्याय 8 — स्वयं को गढ़ने का अभ्यास

भुवन ठहर गए— लड़के के प्रश्न के चारों ओर हवा को धीरे-धीरे बैठने देते हुए। उसी क्षण उन्होंने समझ लिया कि स्मृति का असली उद्देश्य भावुक हो जाना नहीं, सीख देना है। उन्होंने आरव की ओर मुड़कर देखा, उस शांत दृढ़ता के साथ जो केवल वही व्यक्ति रखता है जिसने टूटे हुए सपने के दोनों किनारों को जीकर समझा हो। "अब, " भुवन ने कहा, "अभ्यास शुरू करते हैं।"

मन एक परिदृश्य की तरह

भुवन अब उस तरह बोल रहे थे जैसे कोई कोच किसी उभरते हुए खिलाड़ी से बात करता है, न प्रशंसा के लिए, बल्कि उसकी क्षमता उसके सामने खोल देने के लिए। "हर मन, " उन्होंने शुरुआत की, "तीन शक्तियों से आकार लेता है, पूर्वाग्रह (Bias), शोर (Noise) और समझ (Understanding)।" उन्होंने अपनी चप्पल से ज़मीन पर तीन रेखाएँ खींचीं।

पहली रेखा "पूर्वाग्रह, " भुवन बोले, "उन कहानियों की संरचना है जो तुम्हें विरासत में मिली, बिना इस बात के कि तुमने कभी उन्हें परखा हो। 'पहला रैंक नहीं तो असफलता।' 'एक परीक्षा भविष्य तय करती है।' 'दूसरों की गति ही तुम्हारी गति होनी चाहिए।' ये सत्य नहीं हैं। ये भ्रम हैं, ऐसी मिथक जो युवाओं के मन में अनिवार्यता का जादू रचकर चिपक जाते हैं।"

दूसरी रेखा, फिर उन्होंने दूसरी रेखा पर इशारा किया। "Noise, " वे बोले, "दुनिया की अनियमितता है, परिस्थितियाँ, भाग्य, परीक्षा के बीच में खाँसता परीक्षक, एग्ज़ाम वाले दिन का बुखार। अधिकतर लोग शोर को अपनी कमजोरी समझ बैठते हैं। लेकिन याद रखना, शोर का तुम्हारे भाग्य से कोई लेना-देना नहीं।"

तीसरी रेखा, अंत में उन्होंने तीसरी रेखा को छुआ। “Understanding, ” उन्होंने कहा, “इन दोनों का प्रत (antidote) है। जब तुम समझ लेते हो कि क्या शक्तियाँ

तुम्हें आकार दे रही हैं, तब तुम परछाइयों से लड़ना छोड़ देते हो।”

आरव सुन रहा था, शब्द ही नहीं, उनकी संरचना, उनकी स्पष्टता, जो भ्रम को पहली बार एक नक़्शे में बदल रही थी। भुवन ने निष्कर्ष दिया, “यह है विकास की पहली साधना: अपने आपको गढ़ने से पहले यह जानो कि तुम्हें क्या गढ़ रहा है।”

असफलता की पुनर्समीक्षा—निर्भय होकर

कुछ कदम नीचे उतरने के बाद भुवन फिर बोले, इस बार व्यवहार-विज्ञान की तीक्ष्णता और एक मार्गदर्शक की गर्माहट साथ लिए हुए। “याद है, मैं राँची में कैसे टूट गया था?” उन्होंने पूछा। “मनोवैज्ञानिक इसे कहते हैं कथानक-समापन (narrative foreclosure) वह स्थिति है, जब व्यक्ति यह मान लेता है कि उसकी कहानी अब आगे नहीं बढ़ सकती। जब इंसान खुद को यह कहानी सुना देता है

कि अब सब खत्म हो चुका है।” भुवन ने नरमी से आरव की ओर देखा। “तुमने भी वही किया जब तुम असफल हुए। तुमने अपनी किताब बहुत जल्दी बंद कर दी।” उन्होंने लड़के के कंधे पर सहारा देती हुई अपनी हथेली टिका दी। “गलती फैसले में नहीं होती, फैसला तो डेटा है। और डेटा, किसी भी निपुणता का कच्चा माल होता है।”

उनकी विद्वतापूर्ण आवाज़ अब और मानवीय हो गई, जैसे किसी ने विज्ञान में स्नेह मिला दिया हो। “असफलता निर्णय नहीं, सूचना है। वह बताती है कि

सीख का अगला क्षेत्र कहाँ है, और यह भी कि ध्यान वहीं जाए, आत्म-दोषारोपण में नहीं।"

परिवार की भूमिका और मौन बुद्धि

पुराने नीम के पेड़ के पास से गुजरते हुए भुवन की चाल धीमी हो गई। "मेरी माँ की बुद्धि, " उन्होंने कहा। "वह संज्ञानात्मक विकृतियों के नाम नहीं जानती थीं, न ही 'लॉस एवरज़न' जैसे शब्दों की चर्चा करती थीं। लेकिन वह एक कहीं अधिक गहरी बात समझती थीं, कि एक युवा मन सफलता से नहीं, "बल्कि देखे जाने से जीवित रहता है, उस अनुभव से कि कोई उसे समझ रहा है, उसकी कोशिशों को पहचान रहा है, उसके संघर्ष को बिना तौल-जोख के स्वीकार कर रहा है। जब एक युवा मन यह महसूस करता है कि वह केवल परिणाम नहीं, बल्कि एक व्यक्ति के रूप में देखा जा रहा है, तभी उसके भीतर टिके रहने की शक्ति जन्म लेती है। तभी वह स्वयं से भागने के बजाय स्वयं में लौटना सीखता है।" उन्होंने आरव की ओर देखा। "आज जब तुम घर जाओ, " भुवन ने कहा, "यह बात समझ लेना: तुम्हारे माता-पिता एक परिपूर्ण संतान नहीं चाहते। वे उस संतान को चाहते हैं जो अब भी प्रयास कर रही हो।" वे फिर आगे बढ़ चले।

"सीखने का विज्ञान तुम्हें न्यूरोप्लास्टिसिटी के बारे में बताएगा। मनोविज्ञान लचीलापन सिखाएगा। लेकिन मानवीय सत्य इससे कहीं सरल है, मन का विकास दबाव से नहीं, स्नेह के सहारे सबसे तेज़ होता है।"

त्वरित और विचारशील: सीखने की दो दृष्टियाँ

वे धूप के एक उजले टुकड़े तक आ पहुँचे। अचानक अँधेरे और रोशनी की वह रेखा मानो भीतर की ही किसी सीमा को उजागर कर रही हो। भुवन ने उसी धूप की ओर संकेत किया, जैसे शब्दों से पहले कोई सत्य स्वयं सामने आ गया

हो। “तेज़ सोच, ” उन्होंने धीरे से कहा, “तुम्हारी सहज, स्वचालित सिस्टम 1, तुम्हें तुरंत निर्णय लेने में मदद करती है। यही वह शक्ति है जो समय की कमी में काम आती है, जो तुरंत पहचानती है, जो बिना रुके प्रतिक्रिया देती है।” फिर उनका स्वर थोड़ा ठहर गया। “और मंथर सोच, सिस्टम 2, तुम्हें समझने में मदद करती है। यह वही सोच है जो प्रश्न करती है, जो अर्थ खोजती है, जो जल्दबाज़ी से नहीं,

परिपक्वता से आगे बढ़ती है।” उन्होंने ज़मीन पर एक वृत्त बनाया और उसे दो बराबर हिस्सों में बाँट दिया। “कोचिंग यहीं से शुरू होती है, ” भुवन बोले, “जब तुम यह पहचानना सीखते हो कि किस क्षण कौन-सी सोच आवश्यक है। तेज़ सोच, स्मरण के लिए, ड्रिल के लिए, समय-संयोजन और अंक-साधना के लिए। मंथर सोच, गहराई के लिए, व्याख्या के लिए, अर्थ गढ़ने और रणनीति बनाने के लिए।” उन्होंने मुस्कुराते हुए बात पूरी की, वह मुस्कान जो आश्वासन भी थी और चुनौती भी। “दुनिया तुम्हें केवल गति सिखाती है, तेज़ चलो, पहले पहुँचो, आगे निकलो। लेकिन बुद्धि तुम्हें लय सिखाती है, कब तेज़ होना है और कब ठहरना है। गति तुम्हें आगे ले जाती है, पर लय तुम्हें टूटने से बचाती है।”

अनुष्ठान: स्थिरता की संरचना

ढलान समतल होते ही भुवन ठहर गए। उन्होंने अपनी पुरानी नोटबुक खोली और एक नया पन्ना पलट दिया, मानो किसी भीतर की यात्रा का औपचारिक आरंभ हो रहा हो। “अब ध्यान से सुनो, आरव, ” उन्होंने कहा “जो मैं अब कहने जा रहा हूँ, वह केवल स्मृति नहीं है, वह एक विधि है। यादें बीत जाती हैं, पर विधियाँ जीवन गढ़ती हैं।” उनका स्वर अब मार्गदर्शक से आगे बढ़कर कोच का हो गया था, सीधा, सुव्यवस्थित, धरातल से जुड़ा हुआ। “भटकते हुए मन को स्थिर करने वाले पाँच अनुष्ठान होते हैं, ” भुवन बोले। “ये वे

अभ्यास हैं जो समझ को पहचान में बदल देते हैं, जो ‘जानने’ को ‘होने’ में रूपांतरित करते हैं।”

उन्होंने लिखना शुरू किया—

1. स्थिरता (Grounding)

किसी भी महत्वपूर्ण कार्य से पहले दस सचेत श्वासें। “मनोविज्ञान से पहले शरीर की लय को नियंत्रित करो। जब शरीर शांत होती है, मन सुनना सीखता है।”

2. द्वि-पथीय अधिगम (Two-Track Learning)

एक घंटा—तेज़।

एक घंटा—मंथर।

“गति और गहराई को साथ प्रशिक्षित करो। किसी एक के लिए दूसरे की बलि कभी मत दो।”

3. अंतराल-पत्रिका (The Gap Journal)

हर कठिनाई को तीन भागों में बाँटो—

– कौशल का अंतर

– परिवेश का अंतर

– कथा का अंतर

“समस्या को व्यक्ति से अलग करो। और व्यक्ति को उस कहानी से, जो वह स्वयं को सुनाता आ रहा है।”

4. अपनापन का एक वाक्य (One Sentence of Belonging)

मैं अपनी रैंक नहीं हूँ; मैं आज का अपना प्रयास हूँ। “पहचान विरासत में नहीं मिलती, उसे गढ़ना पड़ता है।”

5. उद्देश्य-पत्र (The Purpose Card)

एक पंक्ति, जो तुम्हारी जेब में रहे। “उद्देश्य एक दिग्दर्शक है। वह मन को भटकने नहीं देता, जब रास्ते धुँधले हो जाएँ। भुवन ने वह पन्ना सावधानी से फाड़ा और आरव की ओर बढ़ा दिया। “यह होमवर्क नहीं है, ” उन्होंने शांत दृढ़ता से कहा। “यह स्वयं को बनाने का नक्शा है।”

पुनरागमन का दर्शन

वे उस मोड़ पर आ पहुँचे थे जहाँ से उनकी राहें अलग होने वाली थीं। “आरव, ” भुवन ने कहा, उनकी आवाज़ में सुबह की रोशनी जैसी स्थिरता थी, “अतीत की ओर लौटने का उद्देश्य संघर्ष का महिमामंडन करना नहीं था। उसका उद्देश्य यह समझना था कि हर मन, मेरा, तुम्हारा, हर विद्यार्थी का, भय और स्पष्टता के बीच

एक निरंतर प्रवाह में जीता है।” उन्होंने अपना हाथ हृदय पर रखा।“जो तुमने मेरी कथा में देखा, वह सफलता नहीं थी। वह निर्माण था, स्वयं को धीरे-धीरे गढ़ने की प्रक्रिया।” उन्होंने लड़के की आँखों में गहराई से देखा। “आज तुम घर लौट रहे हो। उत्तर लेकर नहीं। बल्कि उपकरणों के साथ। ढाँचों के साथ। अनुष्ठानों के साथ। और बनते जाने के दर्शन के साथ।” आरव ने हल्के से निगला। “सर… क्या मैं बदल पाऊँगा?” भुवन मुस्कुराए, वह मुस्कान जिसमें ज्ञान भी था और करुणा भी। “परिवर्तन कोई घटना नहीं है, ” उन्होंने कहा। “परिवर्तन एक अभ्यास है। और अभ्यास का अर्थ है, हर दिन अपने बेहतर स्वरूप की ओर लौटना।” उन्होंने उस पथ की ओर संकेत किया जो आरव के छात्रावास की ओर जाता था। “फिर से शुरू करो। धीरे शुरू करो। सचेत होकर

शुरू करो। सत्य से शुरू करो। और यदि गिरो, तो लौट आना। हमेशा लौट आना।" आरव कुछ कदम चला, फिर ठिठककर मुड़ा। "सर... और आप?" भुवन ने गहरी साँस छोड़ी, मानो वर्षों का अनुभव एक शांत स्पष्टता में टिक गया हो। "मैं भी लौटता हूँ, " उन्होंने कहा। "हर दिन। यही एक अपरिमित मन का कार्य है।" लड़का रास्ते में ओझल हो गया। और भुवन ने अनुभव किया, अतीत वर्तमान में विलीन हो गया है, वर्तमान संभावना में खुल गया है और संभावना एक उत्तरदायित्व बन गई है।

उत्तरदायित्व, सिखाने का। मार्गदर्शन का। सेवा का। अभ्यास का। फिर से आरंभ करने का। क्योंकि विकास का यही सच्चा दर्शन है, मन अपनी स्मृतियों से नहीं गढ़ा जाता। मन गढ़ा जाता है इस बात से कि वह अपनी जागृतियों का कितनी निष्ठा से अभ्यास करता है।

निरंतरता मौन में है — मौन ही निरंतरता है

अगली सुबह, दुनिया के जागने से बहुत पहले, भुवन ठंडी हवा में बाहर आए। आज कोई पहाड़ी-चढ़ाई तय नहीं थी। न कोई पाठ पढ़ाना था। न कोई कथा फिर से जीनी थी। और फिर भी, उनके भीतर कुछ सलीके से व्यवस्थित-सा लग रहा था, मानो वर्षों से परिचित अव्यवस्था के बाद किसी कमरे की चुपचाप सफ़ाई हो गई हो। वे एक नीम के पेड़ के पास ठहरे। सुबह की हल्की हवा में उसकी पत्तियाँ काँप रही थीं। पेड़ वैसा ही दिखता था, पर भुवन जानते थे, ऐसा नहीं है।

हर ऋतु ने उसे गढ़ा था। हर आँधी ने उसे तराशा था। विकास अक्सर उसी क्षण दिखाई नहीं देता। वह तब प्रकट होता है जब हम एक कदम पीछे हटकर देखते हैं। उसी भोर, आरव ने अपना तीस-दिवसीय अभ्यास आरंभ किया था। भुवन ने कल्पना की, खिड़की के पास बैठा वह लड़का, नोटबुक खुली हुई, श्वास

स्थिर, पहला अनुष्ठान जड़ पकड़ता हुआ। इस विचार में एक सुकून था, कि जो पथ कभी उन्होंने अकेले तय किया था, अब वह एकाकी नहीं रहा। भुवन ने नीम की छाल को छुआ, जैसे कोई पुराने मित्र को छूता है, और महसूस किया कि उनकी अपनी यात्रा भी एक नए चरण में प्रवेश कर चुकी है न संघर्ष का न प्रमाण का बल्कि, निरंतरता का। क्योंकि वर्षों में धीरे-धीरे सीखा गया सत्य, जो अब उन्होंने आरव को सौंप दिया था, सरल था: कोई भी मन कभी पूर्ण नहीं होता। सबसे दृढ़ मन भी डगमगाता है। सबसे बुद्धिमान मन भी भूलता है। सबसे अनुशासित मन भी भटकता है। पर जो मन लौट आता है, जो श्वास लेता है, विचार करता है, स्वयं को पुनः संतुलित करता है और फिर से आरंभ करता है, वह केवल शक्तिशाली नहीं रहता। वह स्थिर हो जाता है। सूर्य के उगते ही भुवन के भीतर एक शांत निश्चितता उतर आई: जीवन का वास्तविक कार्य असाधारण छलाँगों में नहीं, बल्कि साधारण अभ्यासों की असाधारण निष्ठा में होता है। वे मुस्कुराए, एक आंतरिक, परिचित मुस्कान जो तब आती है जब स्पष्टता शोर नहीं मचाती,

पर निस्संदेह उपस्थित होती है। कहीं शहर में, आरव दिन की अपनी पहली मंथर श्वास ले रहा था। कहीं भीतर, भुवन का वह पुराना बाल-स्वरूप मौन स्वीकृति में सिर हिला रहा था। वृत्त पूर्ण था। पाठ अपने सही उत्तराधिकारी तक पहुँच चुके थे। और यात्रा, भुवन की, आरव की, और हर पाठक की, नाटकीय विजय में नहीं, बल्कि रोज़-रोज़ बनते जाने के सौम्य अनुशासन में आगे बढ़ती रहेगी। भुवन घर की ओर मुड़े। कदमों में कोई जल्दबाज़ी नहीं थी। कल अपनी अनिश्चितताएँ लाएगा। पर अब वह जान चुका था, मार्गदर्शन बाहर से नहीं, नियमित अभ्यास के भीतर से जन्म लेता है और जो मन स्वयं से पुनः जुड़ना सीख ले, उसे कोई पैमाना सीमित नहीं कर सकता। उसने प्रातः की निस्तब्ध हवा में धीमे स्वर में कहा, मानो यह किसी व्यक्ति के लिए नहीं, किसी कक्षा, किसी रैंक-सूची के लिए नहीं, बल्कि हर उस चेतना के लिए हो जो स्पष्टता की

खोज में भटकती है"फिर से आरंभ करो। लौटो।और पुनः बढ़ो। क्योंकि अपरिमित मन कोई अंतिम आकार नहीं पाता, वह निरंतर बनता रहता है।" और फिर कुछ भी नहीं कहा गया। न कोई उपदेश। न कोई निष्कर्ष। न कोई अंतिम उत्तर। केवल एक खुला क्षण, जहाँ पाठक अपने मन की धड़कन सुन सकता है। क्योंकि जो सच में समझा जाता है, वह शब्दों में नहीं ठहरता। और जो यात्रा मौन में जारी रहती है, उसे किसी अंत की आवश्यकता नहीं होती।

****

अभ्यास-आधारित पृष्ठ

(आज के लिए। अभी के लिए। यहीं से।)

निर्देश:

इसे जल्दी-जल्दी न भरें। यह परीक्षा नहीं है—यह संवाद है।

I. स्थिरता की शुरुआत (2 मिनट)

आँखें बंद करें। नाक से श्वास लें… मुँह से छोड़ें। ऐसा 10 बार।

अब लिखें:

इस समय मेरा मन कैसा है? (एक वाक्य पर्याप्त है)

II. आज का कार्य—तेज़ और मंथर

आज आप क्या सीखेंगे?

तेज़ अभ्यास (Recall / Drill / Timing): (30–60 मिनट)

मंथर अभ्यास (Depth / Meaning / Strategy): (20–60 मिनट)

स्मरण:

आज गति भी आवश्यक है, और गहराई भी।

III. अंतराल-पत्रिका (Gap Journal)

आज जो कठिनाई आई, उसे बाँटिए—

1. कौशल का अंतर (Skill Gap): क्या सीखना शेष है?

---

2. परिवेश का अंतर (Environment Gap): क्या बाहरी बाधा थी?

---

3. कथा का अंतर (Story Gap): मैं खुद से क्या कहानी कह रहा/रही हूँ?

स्मरण:

समस्या आप नहीं हैं। समस्या केवल एक संकेत है।

IV. अपनापन का वाक्य (आज का सत्य)

नीचे लिखें और ज़ोर से पढ़ें—

मैं अपनी रैंक नहीं हूँ; मैं आज का अपना प्रयास हूँ।

अब लिखें— आज मैंने कौन-सा ईमानदार प्रयास किया?

V. उद्देश्य-पत्र (Pocket Line)

आज के लिए एक पंक्ति चुनें—

- ☐ मैं समझ के लिए पढ़ता हूँ।
- ☐ मैं धैर्य से आगे बढ़ता हूँ।

- ☐ मैं आज पूरे मन से प्रयास करूँगा।
- ☐ अपना वाक्य:

VI. दिन का समापन (30 सेकंड)

आज के दिन से एक सीख—

आज के लिए पर्याप्त है।

यदि सब नहीं हो पाया—तो भी ठीक है। यदि कुछ हुआ—तो वही बीज है। कल फिर लौटिए। यही अभ्यास धीरे-धीरे आपकी पहचान बनेगा।